सहजानंद शास्त्रमाला

पंचाध्यायी प्रवचन

भाग 4

रचयिता

अध्यात्मयोगी, न्यायतीर्थ, सिद्धान्तन्यायसाहित्यशास्त्री

पूज्य श्री क्षु० मनोहरजी वर्णी "सहजानन्द" महाराज

प्रकाशक

श्री सहजानंद शास्त्रमाला, मेरठ

एवं

श्री माणकचंद हीरालाल दिगम्बर जैन पारमार्थिक न्यास

गांधीनगर, इन्दौर

Online Version : 001

http://sahjanandvarnishastra.org/

पञ्चाध्यायी प्रवचन

[भाग ३, ४, ५]

प्रवक्ता :
अध्यात्मयोगी न्यायतीर्थ पूज्य श्री १०५ क्षुल्लक
श्री मनोहर जी वर्णी 'सहजानन्द जी' महाराज

प्रबन्ध-सम्पादक :
बैजनाथ जैन, ट्रस्टी सदस्य सहजानन्द शास्त्रमाला
यादगार बड़तला, सहारनपुर

प्रकाशक :
मंत्री, सहजानन्द शास्त्रमाला
१८५ ए, रणजीतपुरी, सदर मेरठ

मुद्रक :
पं० काशीराम शर्मा 'प्रफुल्लित'
साहित्य प्रेस सहारनपुर

सन् १९७२] सर्वाधिकार सुरक्षित [न्योछावर ५ रु.

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

पञ्चाध्यायी प्रवचन

(चतुर्थ भाग)

●

प्रवक्ता :
[अध्यात्मयोगी पूज्य श्री १०५ क्षु. मनोहर जी वर्णी "सहजानन्द" महाराज]

●

ननु चैकं सदिति यथा तथा च परिणाम एव तद् द्वैतम् ।
वक्तुं क्षममन्यतरं क्रमतो हि समं न तदिति कुतः ॥ ३४१ ॥

सत् और परिणामका स्वरूप अन्तर आदि जाननेका प्रश्न—वस्तु स्वत: सिद्ध है और परिणामी है पूर्वोक्त इस वर्णनसे वस्तुके स्वरूपमें जो अनेक शंकायें उठ रही थीं उन सबका समाधान हो चुका है। अब सत् और परिणामके सम्बन्धमें पूछा जा रहा है कि जिस प्रकार सत् एक चीज है उसी प्रकार परिणाम भी चीज एक है। यर्थाथतया प्रत्येक वस्तु एक ही है, अपने चतुष्टयमें है और प्रतिसमयमें जो परिणाम होता है वह परिणाम भी एक समयमें है। तो यों जब परिणाम भी एक चीज है और सत् भी एक चीज है फिर क्या कारण है कि इन दोनोंमेंसे किसी एकका क्रम से ही कथन किया जा सकता दोनोंको एक साथ नहीं किया जा सकता याने द्रव्य दृष्टिसे तो सत्का वर्णन होता है, शाश्वत वस्तुका वर्णन किया जाता है और पर्याय दृष्टिसे परिणामका वर्णन होता है द्रव्य दृष्टिमें सद्रूप ही दिख रहा, पर्याय दृष्टिमें विशिष्ट सत् परिणामरूप परिवर्तनरूप ही दिख रहा है, तो दोनोंका एक साथ कथन क्यों नहीं बनता है ? शंकाकारकी यहां यह भी जिज्ञासा है कि सत् और परिणामके साथ क्या किस प्रकारका सम्बन्ध है ? एक पदार्थमें ये दोनों बातें किस प्रकारसे रहती हैं जिससे कि इन दोनोंका कथन एक साथ नहीं बन पाता है। यों शंकाकारके आशयमें यह जिज्ञासा उत्पन्न होती है कि सत् और परिणाममें भेद क्या है ? मर्म क्या है और उसका वस्तुमें निवास किस प्रकारसे है ?

अथ किं करवादिवर्णाः सन्ति यथा युगपदेव तुल्यतया ।
वक्ष्यन्ते क्रमतस्ते क्रमवर्तित्वाद् ध्वनेरिति न्यायात् ॥ ३४२ ॥

युगपत तुल्यरूपसे विद्यमान क ख आदि वर्णोंकी ध्वनिकी क्रमवर्तित्व

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

की तरह सत् और परिणामकी व्यक्ति माननेका प्रश्न – शङ्काकार पूछ रहा है कि सत् और परिणामके विषयमें क्या इस प्रकारकी बात है कि जैसे क ख आदिक वर्ण एक साथ समानरूपसे विद्यमान रहते हैं पर उनमें क्रमवर्तीपना पाया जाता है क्योंकि वे सब वर्ण क्रमसे ही बोले जा सकते हैं, क्या इसी भाँति सत और परिणाम एक साथ विद्यमान तो रहते हों, पर उनका कथन क्रमसे कहा जाता हो क्या सत् और परिणामकी बात इस तरह है ? यहाँ शङ्काकारने यह तो मान लिया इस समय कि पदार्थमें सत् और परिणाम एक साथ रह रहे हैं जैसे कि वस्तुमें या ज्ञानमें क ख आदिक सभी वर्ण एक साथ रहते हैं, लेकिन जैसे वर्णोंका उच्चारण क्रमसे हो पाता है इसी प्रकारसे सत् और परिणामका कथन क्रमसे हो पाता है। क्या इस तरहकी बात है जो सत् और परिणाम दोनोंका कथन एक साथ नहीं बन पाता ? जिस कारण से कि अलग अलग दृष्टियोंमें अलग अलग धर्म निरखा जा रहा है। जैसे द्रव्यदृष्टिसे वस्तुको नित्य देखा तो नित्यपना देखनेमें तभी आया जब अनित्यपना तो न आया। जब पर्याय दृष्टिसे वस्तुमें अनित्यपना देखा तो अनित्यपना देखनेमें आया, पर नित्यपना नहीं आया। न आया कथनमें अथवा जिस दृष्टिसे देख रहे हैं वह समझमें भी न आये फिर भी नित्य और अनित्य दोनों उस वस्तुमें रहते हैं। तो क्या इस प्रकारसे सत् और परिणामके विषयकी बात है कि दोनों रहे तो आये सदा एक साथ, किन्तु उनका कथन क्रमसे हो पाता हो। क्या इस तरह सम्बन्ध सत् और परिणाममें है ? अब इस प्रश्नका समाधान करते हैं।

अथ किं खरतरदृष्ट्या विन्ध्यहिमाचलयुगं यथास्ति तथा।
भवतु विवक्ष्यो मुख्यो विवक्तुरिच्छावशाद् गुणोऽन्यतरः ।३४३।

विन्ध्याचल व हिमाचलकी तरह सत् और परिणामको विवक्षावश मुख्य और गौण करनेका प्रश्न – अब शङ्काकार कहता है कि सत् और परिणामके सम्बन्धमें क्या यह बात है कि जिस प्रकार देखनेमें, विन्ध्याचल और हिमालय ये दो स्वतंत्र पर्वत हैं परन्तु दोनों उस वक्ताकी इच्छासे जो विवक्षित होता है वह मुख्य हो जाता है और दूसरा गौण है। हैं दोनों पर्वत, एक साथ हैं, जानकारी है, परन्तु जैसे पर्वतकी प्रशंसा कोई वक्ता कर रहा हो तो उसकी विवक्षामें वही पर्वत है, जिसकी प्रशंसा की जा रही और दूसरा पर्वत गौण हो जाता है, क्या इस प्रकार सत् और परिणामकी बात स्वतंत्रतया हो तो दोनोंपर उन दोनोंमें जो विवक्षित हो वह मुख्य हो जाय तो दूसरा गौण हो जाय, क्या इस प्रकारकी बात सत् और परिणामके सम्बन्धमें है ? शङ्काकारके आशयसे सत् और परिणाम दोनों स्वतंत्र तत्त्व हैं और वे दोनों एक पदार्थमें रहा करते हैं, पर जिस समय सत्को देखा जा रहा है उस समय सत् मुख्य है और पर्याय गौण है और जब पर्यायको देखा जा रहा है तो पर्याय मुख्य

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

है और सत् गौण है, क्या इस प्रकारसे सत् और परिणामके सम्बन्धमें ऐसा धर्म है ? क्या इस तरहसे सत् और परिणाम रह रहे हैं। इस प्रकार शङ्काकारने सत् और परिणामके सम्बन्धमें यह दूसरा प्रश्न है, जो इतना बड़ा विन्ध्याचल और हिमालय पर्वतके उदाहरणसे पूछा गया है। शङ्काकारके आशयमें पदार्थमें दोनों ही तत्त्व हैं। उससे इन्कार नहीं कर रहा है। केवल एक कथनमें नहीं आ पा रहे हैं अर्थात् उसे जो अनुभय नामके अवक्तव्य नामके तृतीय स्वतंत्र भङ्ग द्वारा जो बताया गया है उसके बारेमें संदेह कर रहा है कि क्यों अवक्तव्य है ? क्या विवक्षित मुख्य होता है और अविवक्षित गौण होता है ? क्या इस पद्धतिसे उन दोनोंमें अन्तर बताया जा रहा है ? ऐसा यह दूसरा प्रश्न किया गया ?

अथ चैकः कोऽपि यथा सिंह साधुर्विवक्षितो द्वेधा ।
सत्परिणामोऽपि तथा भवति विशेषणविशेष्यवत् किमिति ३४४

सिंह और साधुकी तरह सत् और परिणामको विशेष्य माननेका प्रश्न

जिज्ञासु यहाँ पूछ रहे हैं कि क्या सत् और परिणामके सम्बन्धमें यह बात है जैसे कि कोई एक व्यक्ति कोई सिंह और कभी साधु दो तरहसे विवक्षित होते हैं क्या इस प्रकार एक वस्तु कभी सत् और कभी परिणाम रूपसे विवक्षित हो क्या इस प्रकार की दो दिशायें हैं अर्थात् वस्तुका सत् और परिणामके साथ इस तरहका क्या विशेषण विशेष्य सम्बन्ध है ? जैसे कोई साधु पुरुष है उसकी जब प्रशंसा की जाती है तो वह विक्रममें पराक्रममें, निर्भयतामें सिंह है ऐसा उसके सम्बन्धमें कहते हैं अथवा उसकी सिंह वृत्ति है। तो यों साधुको कभी सिंह शब्दसे कहते हैं कभी साधु शब्दसे भी कहते हैं, तो यहाँ साधु विशेष्य है और सिंह विशेषण। क्या इस प्रकार सत् और परिणाममें एक कोई भी विशेष्य हो दूसरा विशेषण हो, और कभी सत् शब्दसे कहा जाता हो कभी परिणाम शब्दसे कह दिया जाता हो, क्या इस प्रकार सत् और परिणामके साथ वस्तुका सम्बन्ध है ? यह तीसरी जिज्ञासामें जाननेकी इच्छा प्रकट की जा रही है। सत् और परिणाम इन दोनोंका मानना अनिवार्य बताया गया है और स्वतः सिद्ध है इस कारणसे वह सत् नित्य है और परिणाम है वह अनित्य है। तो यों नित्य और अनित्यके संकेत रूप सत् और परिणामका उस पदार्थमें सम्बन्ध क्या है और क्यों इन दो शब्दोंसे कहा जाता है और क्यों एक साथ इन दो शब्दोंका वक्तव्य नहीं बनता है? इस प्रकार यह तृतीय जिज्ञासा की गई है।

अथ किमनेकार्थत्वादेकं भावद्वयाङ्कितं किञ्चित् ।
अग्निर्वैश्वानर इव सव्येतरगोविषाणवत् किमथ ॥ ३४५ ॥

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

अग्नि और वैश्वानरकी तरह एक ही वस्तुको सत् और परिणाम इन दो नामोंसे कहे जानेकी चतुर्थ जिज्ञासा—अब जिज्ञासु चतुर्थ जिज्ञासा प्रकट कर रहा है कि क्या सत् और परिणामके साथ इस तरहका सम्बन्ध है जैसे कि एक ही पदार्थ नाना प्रयोजन होनेसे अग्नि और वैश्वानर इन दो नामोंसे अङ्कित होता है। लौकिक कार्योंमें, सामान्य व्यवहारमें उसे अग्नि नामसे कहते हैं और जब कभी धार्मिक यज्ञ आदिक समारोह हों अथवा पूजन विधानोंमें उन्हें वैश्वानर नामसे कहते हैं। तो प्रयोजनभेदसे जैसे वह एक ही पदार्थ कभी अग्नि नामसे अङ्कित होता है कभी वैश्वानर नामसे कहा जाता है, इस प्रकार सत् और परिणाम भी नाना प्रयोजन होनेसे एक ही वस्तुके नाम हैं क्या ? पदार्थ तो एक ही है, किंतु जब तक शाश्वत देखनेका प्रयोजन है, पदार्थ अनादि अनन्त है, ऐसा बतानेका जब प्रयोजन है तब वह सत शब्द से कहा जाता है और जब परिणतियोंके बतानेका प्रयोजन है कि पदार्थमें प्रतिसमय जुदी-जुदी परिणतियाँ होती हैं तो पर्यायोंको बतानेका प्रयोजन होनेपर उसे परिणाम शब्दसे कहा जायगा, क्या इस तरह प्रयोजनभेदसे एक ही पदार्थको दो नामोंसे कहा जानेकी बात है ? यह चतुर्थ जिज्ञासा सत और परिणामके संबंधमें की गई है।

दायें बायें सींगकी तरह सत् और परिणामको प्रधानरूप माननेकी पञ्चम जिज्ञासा अब जिज्ञासु ५वीं जिज्ञासामें पूछ रहा है कि सत और परिणामका क्या इस तरहसे दर्जा है जैसे कि दायें और बायें सींग होते हैं ? जैसे किसी गाय या बछड़ेके दो सींग प्रधानरूपसे समानरूपसे बने हुए हैं। उनमें किसी सींगको मुख्य कह दिया जाय, किसीको गौण कह दिया जाय, यह बात तो नहीं है। दोनों समान हैं दोनोंका आरम्भ भी एक समयसे है और दोनोंकी व्यक्त अवस्था भी समान रूपसे है और एकका दूसरे पदार्थके साथ कोई सम्बन्ध भी नहीं है। स्वतंत्र-स्वतंत्र दोनों हैं मगर उन दोनों सींगोंका आधार कोई एक पशु है। तो जैसे दायें बायें सींग होते हैं क्या इस प्रकार पदार्थमें सत और परिणाम ये दो बातें हैं ? स्वतंत्ररूपसे सत का भी वही दर्जा, परिणामका भी वही दर्जा और होता है वह एक पदार्थमें। क्या इस तरह एक पशुके दायें बायें सींगकी तरह सत और परिणाम होता है ? यह ५ वीं जिज्ञासामें प्रश्न किया गया है।

अथ किं कालविशेषादेकः पूर्वं ततोऽपरः पश्चात्।
आमानामविशिष्टं पृथिवीत्वं तद्यथा तथा किमिति ॥ ३४६ ॥

कच्चे पक्के मृद्घटकी तरह सत् और परिणामको पूर्व अपर माननेकी जिज्ञासा अब कोई छठवाँ जिज्ञासु सत् और परिणामके स्वरूपका दिग्दर्शन करने वाला, पूछ रहा है कि कालभेदसे सत् और परिणाम क्या कोई पहिले हुए कोई पीछे

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

हुए, ऐसी उसमें बात है ? जैसे कि जब घड़ा बनता है तो उसमें पहिले कच्ची पर्याय रहती है और घड़ा पकनेपर पक्की पर्याय आगे होती है, याने कच्ची मिट्टी पहिले होती है और पक्की उसके मिट्टी उसके अनन्तर समयमें होती है। इस प्रकारसे पदार्थमें जो सत् और परिणाम बताये गए हैं क्या उनमें ऐसे विभाग हैं कि मानो सत् पहिले होता हो और परिणाम बादमें होता हो ? सामान्यजनोंकी एक सहसा दृष्टिमें आ सकता है ऐसा कि सत् पहिले है, पर्याय उसके बाद है। जब कोई चीज हो तब उसपर पर्यायें डालें ऐसा एक मोटा दृष्टान्त रखकर कोई सोच सकता है कि सत् पहिले होता है और पश्चात् फिर उसका परिणाम उत्पन्न होता है। क्या इस भाँति सत् और परिणामकी स्थिति है ? ऐसी यह एक छठी जिज्ञासामें पूछा गया है। इस जिज्ञासामें काल भेदकी दृष्टि रखी है और अपादान अपादेयकी दृष्टि रखी है। सत्में परिणाम निकला, परिणाममेंसे सत् नहीं निकला, ऐसी भी तो लोगोंकी दृष्टि बन सकती है। तो जैसे वृक्षसे फल निकला तब वृक्ष ध्रुव रहा, वृक्ष पहिले रहा, फल अध्रुव रहा और फल अनन्तर समयमें हुआ। तो यों ही कच्ची मिट्टीसे पक्की मिट्टी बनी या पक्के घड़ासे कच्चा घड़ा बना ? तो इसमें कच्चे घड़ेकी स्थिति पहिले है पक्के घड़ेकी स्थिति बादमें है। तो क्या इस ही प्रकारसे सत् और परिणामकी स्थिति है कि सत् पहिले हो और उसके अनन्तर समयमें परिणाम होता हो ? यह छठवीं जिज्ञासा है।

अथ किं कालक्रमतोऽप्युत्पन्नं वर्तमानमिव चास्ति।
भवति सपत्नीद्वयमिह यथा मिथः प्रत्यनीकतया ॥ ३४७ ॥

कालक्रमसे उत्पन्न व परस्पर विरोधरूपसे वर्तमान सपत्नी द्वयकी तरह सत् व परिणाम की परिस्थिति माननेकी सप्तमी जिज्ञासा—अब ७ वीं जिज्ञासामें यह बात कही जा रही है कि सत् और परिणामके सम्बन्धमें कि जैसे आगे और पीछे बरिणी हुई स्त्री, जिसे सौत कहते हैं जैसे वे दो सौत वर्तमान कालमें परस्पर विरुद्ध भावमें रहती हैं अर्थात जिन सवतियोंमें मेल नहीं होता है, एक दूसरेके खिलाफ परिणाम रखा करती हैं, परिणाम कर सकने वाली नहीं है, किन्तु विरुद्ध और एक दूसरे की अवनति चाहने वाली हैं तात्पर्य यह है कि उन दोनोंका चित्त परस्पर विरुद्ध रहता है, मेल नहीं खाता है क्या इस प्रकार सत और परिणाममें परस्पर विरुद्धता है ? कालक्रमसे उत्पन्न तो हुआ हो, मान लीजिए कि सत पहिले होता है और परिणाम उसके बाद होता है। जैसे सवतियाँ एक साथ बरिणी हुई तो नहीं होती, कोई पहिले बरिणी है कोई अनेक वर्ष बाद बरिणी हुई है, तो इसी प्रकार सत और परिणाम इनमें कालक्रम हो, सत पहिले उत्पन्न हुआ पो परिणाम बादमें उत्पन्न हुआ हो यह किसी प्रकार भी उत्पन्न हुआ हो ये दोनों वर्तमान कालमें

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

परस्पर विरुद्ध भावसे रहते हैं क्या ? देखने में तो ऐसा लगता है कि सतकी जब दृष्टि की जाती है तो वह नित्य लगता है, शाश्वत है, सदाकाल है, और जब परिणामकी बात कहते हैं तो उसमें समझ बनती है कि अनित्य है क्षणिक है मिट जाने वाला है, तो भाव भी एक दूसरेसे विरुद्ध मानने पड़ रहे हैं, सत कहनेसे तो नित्यताका भान होता है, परिणाम कहनेसे क्षणिकताका भान होता है। तो लग भी यों रहा है कि ये दोनों परस्पर विरुद्ध भाव वाले हैं। इसी माध्यमसे यह ७ वाँ जिज्ञासु पूछ रहा है कि क्या दो सबतियोंकी तरह सत और परिणाम ये दोनों परस्पर विरुद्ध भाव वाले हैं ?

अथ किं ज्येष्ठकनिष्ठभ्रातृद्वयमिव मिथः सपक्षतया।
किमथोपसुन्दसुन्दमल्लन्यायात्किलेतरेतरस्मात् ॥ ३४८ ॥

अविरोधरूपसे रहनेवाले बड़े छोटे भाईकी तरह सत् और परिणाम की परस्पर सपक्षता माननेकी आठवीं जिज्ञासा—अब यहाँ आठवाँ जिज्ञासु सत और परिणामके सम्बन्धमें पूछ रहा है कि क्या सत और परिणाम ये दोनों एक साथ अविरुद्ध भावसे रह सकते हैं ? जैसे कि बड़ा और छोटा भाई ये दोनों परस्पर अविरुद्ध भावसे मेलसे प्रेमसे रह सकते हैं क्या इस प्रकार सत और परिणाम एक ही जगह वर्तमान कालमें मेलसे रह सकते हैं ? अविरुद्ध रूपसे रहते हैं इस जिज्ञासामें यह बात दृष्टिमें रखी गई है कि दीख तो रहा है कि एक ही पदार्थमें नित्यपना और अनित्यपना अविरुद्ध रूपसे रहते हैं, वही पदार्थ द्रव्य दृष्टिसे नित्य है और पर्याय दृष्टि से अनित्य है। तो यों नित्यपना और अनित्यपना दोनों ही अविरुद्ध भावसे रह रहे हैं, बस इस ही एक स्थूल दर्शनको निरखकर यह जिज्ञासा बनी है कि सत और परिणाम बड़ा और छोटा भाईकी तरह क्या परस्पर अविरुद्ध भावमें रहते हैं ? पौराणिक कथाओंमें दो भाइयोंके प्रेमकी बात बहुत जगह वर्णित है। श्रीराम और लक्ष्मण अपने जीवनमें कैसा परस्पर प्रेमभावमें रहे कि किसी भी क्षण एक दूसरेके प्रति विरुद्ध न हो सके। और वर्तमानमें भी अनेक लोग ऐसे देखे जाते हैं जो परस्पर अविरुद्ध भावसे रहते हैं। सत और परिणाम भी एक पदार्थमें रहते हैं तो उनका भी अविरुद्धपना सा दिखता है। यों सत और परिणामके सम्बन्धमें अविरुद्ध भावसे रहने की जिज्ञासा बन गई हैं।

दो मल्लोंकी तरह सत् और परिणाममें परस्पर आश्रितता माननेकी नवमी जिज्ञासा—अथवा ६ वाँ जिज्ञासु यह पूछता है कि सत और परिणाम क्या दो मल्लोंकी भाँति परस्परमें आश्रित हैं ? जैसे मानों कोई दो मल्ल जिनका नाम सुन्द और उपसुन्द लिया जाता हो तो ये दो मल्ल परस्परमें आश्रित हैं। एक मल्ल

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

दूसरेसे अपेक्षा न रखे तो वे मल्ल अपना क्या कर्तव्य दिखायेंगे ? बड़े बड़े मल्लोंके दृष्य देखनेके समारोहमें लोगोंकी यही तो जिज्ञासा होती है । देखें कैसा मल्ल है और कैसे अपनी कुस्ती दिखाता है । तो एक मल्ल दूसरे मल्लका आश्रय लेकर जब कुछ क्रियायें करे तभी तो वह अपना कुछ कर्तव्य दिखा सकता है । कोई बड़ासे बड़ा भी मल्ल हो यदि वह दूसरे छोटे मल्लको अपने साथमें नहीं रखता है तो उस मल्लका गुजारा चल नहीं सकता । जहाँ कहीं मल्ल युद्धकी प्रदर्शिनियोंमें ये लोग हजारों रुपया कमाते हैं तो क्या एक ही मल्ल रहकर कोई समारोह बना सकेगा ? या अपने गुजारे के लिए कुछ धनार्जन कर सकेगा ? तो यह बात निश्चित है कि दो मल्ल परस्परके आश्रित ही अपना निर्वाह कर पाते हैं । तो जैसे दो मल्लोंका निर्वाह परस्परके आश्रित है क्या इसी भाँति सत और परिणाम भी एक दूसरेके आश्रित हैं ? लगता भी ऐसा है स्थूल दृष्टिमें कि यदि कोई सत रहने वाला पदार्थ नहीं है तो वहाँ परिणाम पर्यायों की बात क्या बताई जाय ? और साथ ही यह भी दिखता है कि यदि परिणाम और पर्यायें कुछ भी नहीं होती हैं तो वहां किस वस्तुको बताया जाय कि यह सदा रहने वाली वस्तु है ? तो मल्लोंकी भाँति सत और परिणाममें भी यह बात नजर नहीं आती है कि ये दोनों परस्पर एक दूसरेके आश्रित हैं । सो इस ६ वीं जिज्ञासामें यह पूछा गया है कि सत और परिणाम दो मल्लोंकी तरह परस्पर सापेक्ष हैं, क्या ऐसी बात यहाँ विदित होती है ?

केवलमुपचारादिह भवति परत्वापरत्ववत्क्रिमथ ।
पूर्वापरदिग्द्वैतं यथा तथा द्वैतमिदमपेक्षतया ॥ ३४६ ॥

परत्व अपरत्व अथवा पूर्वापर दिशाकी तरह सत् और परिणामके कथनमें उपचार व अपेक्षा माननेकी दसवीं जिज्ञासा—सत और परिणामके विषयमें १० वीं जिज्ञासु पूछ रहा है कि क्या सत और परिणाम इस प्रकारका जो द्वैत कहा जा रहा है सो अपेक्षारूपसे कहा जा रहा है जैसे कि परत्व और अपरत्व यह बड़ा है यह छोटा है, यह जेठ है यह लहुरा है । जैसे यह अपेक्षासे कहा जाता है या विचारसे ? क्या इस प्रकार सत् और परिणाममें एक दूसरेकी या किसी बातकी अपेक्षा है क्या ? जैसे कि पूर्व दिशा और पश्चिम दिशा ये दोनों अपेक्षा मात्रसे कहे जाते हैं क्या ? तो सत् और परिणाम ये दोनों भी अपेक्षासे हैं अथवा जैसे सूर्य जिस ओरसे उगता है उसका नाम पूर्व दिशा रख दिया और पूर्वका जो प्रतिपक्षी है उसका नाम पश्चिम दिशा रख दिया । तो जैसे ये पूर्व और अपर दिशा अपेक्षासे हैं या जेठा लहुरा, छोटा बड़ा, दूर निकट ये अपेक्षासे हैं, क्या उसी प्रकार अपेक्षासे ही सत और असत् और आत्माकी सिद्धि है । जब कभी कोई कहता है कि यह मंदिर पास है यह मंदिर दूर है तो पास और दूर अपेक्षासे ही तो हैं जैसे जाने वाला मुसाफिर रास्तेमें

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

किसी मुसाफिरसे पूछता है कि अमुक गाँव कितनी दूर है ? तब वह उत्तर देता है कि बिल्कुल पास है। अब केवल पासका क्या अर्थ है ? दो मील हो तब भी कहा जा सकता कि बिल्कुल पास है दो फर्लांग हो तब भी कहा जा सकता कि बिल्कुल पास है। सुनने वाला हैरान हो जाता है। पासका क्या मतलब ? तो बिल्कुल पास है यह उस मुसाफिरकी दृष्टिकी बात है। उसने किसी दूर वाली चीजको दृष्टिमें रखा है। उसकी अपेक्षासे तो पास ही है अथवा जितनी लम्बाईको वह कुछ दूर समझता है अपेक्षासे बोल रहा है कि यह ग्राम बिल्कुल पास है। तो निकट होना, दूर होना बड़ा होना छोटा होना यह सब अपेक्षासे है, उपचारसे है पूर्व पश्चिम आदिक दिशाओंका विभाग बनाना यह अपेक्षासे है। स्वयं दिशाओंमें क्या पड़ा हुआ है ? भले ही कोई दार्शनिक लोग दिशा नामका भी पदार्थ मानते हैं, पर दिशा क्या पदार्थ है ? आकाश प्रदेश पंक्तियाँ हैं और उनमें अपेक्षा लगा दी गई है तो जैसे विचारसे और अपेक्षासे परत्व अपरत्व पूर्व पश्चिम आदिक व्यवहार चलते हैं क्या सत और परिणाम इन दोनोंका कथन अपेक्षासे चलता है !

किमथाधाराधेयन्यायादिह कारकादिद्वैतमिव ।
स यथा घटे जलं स्यान्नस्यादिह जले घटः कश्चित् ॥ ३५० ॥

घट व जलकी भाँति सत् व परिणाममें आधाराधेय भाव माननेकी एकादशी जिज्ञासा—अब ११ वां जिज्ञासु अपनी जिज्ञासा रख रहा है कि सत और परिणाममें क्या आधार आधेय न्यायसे कारक आदिक द्वैत इसमें घटित हो जायें क्या इस प्रकारसे सत और परिणाम हैं। जैसे कि कहा जाता है—घटमें जल है, आधार हुआ घट आधेय हुआ जल। तो जैसे घटमें जल है यों आधार आधेय भावको व्यक्त करता है, क्या इसी प्रकार सत्में परिणाम है ? यों असत् आधार हुआ और परिणाम आधेय हुआ, क्या इस तरह इसमें आधार आधेय भावकी अपेक्षासे द्वैतपना है ? जैसे यहाँ कोई यह कहे कि जलमें घट है। हाँ, ऐसी घटना हो कोई घट फेंक दिया तो कहेंगे कि जलमें घट है। वह घटना दूसरी हो गई। अब प्रकृत दृष्टान्तमें जलमें घट है ऐसा कोई नहीं कहता। इसी प्रकार परिणाममें सत है, यह भी कोई नहीं कहता। इससे भी कुछ प्रतीत तो होना चाहिए कि सत और परिणाममें आधार आधेय भाव है और लगता सा भी ऐसा है कि सत् तो है शाश्वत, जड़ है वस्तु और उसमें होता है परिणमन। तो इस स्थूल धारणाके अनुसार क्या सत् और परिणाममें आधार आधेय भाव है, इस प्रकारसे द्वैतपना घटित होता है क्या ?

अथ किं बीजांकुरवत्कारणकार्यद्वयं यथास्ति तथा ।
स यथा योनीभूतं तत्रैकं योनिजं तदन्यतरम् ॥ ३५१ ॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

बीज व अंकुरकी तरह सत् और परिणाममें कारण कार्यपना माननेकी द्वादशी जिज्ञासा— अब १२ वाँ जिज्ञासु यहाँ पूछ रहा है कि सत् और परिणाममें क्या इस प्रकारका अन्तर है जैसे कि बीज और अंकुरमें कारणकार्यपना पाया जाता। अंकुर तो है कार्यरूप और बीज है कारणरूप। बीज तो यहाँ योगीभूत है और अंकुर योनिज है, क्या इस प्रकार सत् और परिणाम है कि सत् तो है कारण योनिभूत, उसमेंसे उत्पन्न हुआ परिणाम। तो परिणाम हो गया कार्य अथवा योनिज। यों बीज अंकुरकी तरह सत् और परिणाममें एक तो कारण हुआ और एक कार्य हुआ। क्या इस प्रकारसे सत् और परिणामका स्वरूप समझा जाता है? उक्त जिज्ञासामें तो आधार आधेयकी बात कही गई थी। सत्में परिणाम है, समुत्पादकी बात न थी। जैसे घटमें जल है तो जल उत्पन्न होता है यह बात नहीं है। केवल एक अस्तित्व बताया है कि घटमें जल है। घट भी अस्तित्वरूप है, जलका अस्ति रूप है और दो पदार्थ हैं पर घट आधार है, जल आधेय है। केवल वहाँ आधार आधेय भावरूपसे अस्तित्व बताया था किंतु उस जिज्ञासामें सत और परिणाममें कारण कार्य भावकी प्रच्छना हो रही है। क्या सत कारण है और परिणाम कार्य है? जैसे कि स्थूलरूपसे साधारण जनोंको विदित होता है कि सतसे परिणाम बना, क्या यों सत और परिणाममें कारणकार्य भावका अन्तर है, स्वरूप है क्या?

अथ किं कनकोपलवत् किञ्चित्स्वं किञ्चिदस्वमेव यतः।
ग्राह्यं स्वं सारतया तदितरमस्वं तु हेयमसारतया ॥ ३५२ ॥

स्वर्ण पाषाणकी तरह सत् और परिणाममें कुछको ग्राह्य सारभूत मानने व अन्यको हेय पर असारभूत माननेकी त्रयोदशी जिज्ञासा– अब यहाँ १३ वाँ जिज्ञासु यह जिज्ञासा रख रहा है कि सत और परिणाम स्वर्ण पाषाण की तरह जैसे कि स्वर्णमें किट्ट कालिमा आदिक हैं तो वहाँ कुछ चीज तो स्वरूप है कुछ चीज अस्वरूप है, पररूप है। क्या इस तरह सत और परिणाममें कोई एक स्वरूप हो और दूसरा अस्वरूप हो, क्या इस तरहका भेद है? स्वर्ण पाषाणमें अभी किट्ट कालिमा मिली हुई है। जब योग्य उपायसे उसे आँचमें तपाया जाता है तो वह दूर होता है, पाषाण शुद्ध होता है, स्वर्ण विशुद्ध निकल आता है। तो उस डलेमें कुछ चीज तो थी पररूप, जो कि हेय माना गया और जिसको निकालकर फेंक दिया गया और कुछ है स्वरूप, जो ग्रहण किया गया जिसका मूल्य महत्त्व समझा गया। क्या इस भाँति सत और परिणाममें कुछ तो हुआ ग्राह्य स्वसार रूप और बाकी हुआ हेय असार रूप? जिसे यों कह सकते हैं प्राय: कि सत और परिणाममें सत, तो ग्राह्य है, स्वरूप है, सारभूत है और परिणाम पर्याय परिणमन अवस्था ये अस्व हैं, पररूप हैं, अग्राह्य हैं, हेय हैं और असार हैं, क्या इस प्रकार सत् और परिणाममें परस्पर

http://sahjanandvarnishastra.org/

भेद है ? प्राय: करके कुछ जिज्ञासु साधक इस प्रकारके रुचिया होते हैं कि वे पर्याय मात्रको दृष्टिमें न लेना चाहिए। वे शाश्वत नित्य सत्त्व सहज भावको उपयोगमें लेना चाहते हैं। तो वहाँ भी सिद्ध किया गया जैसे कि परिणाम तो हेय है असार है, उपेक्षाके योग्य है, उसकी ओर दृष्टि भी न करें और सत् शाश्वत नित्यस्वरूप है उसकी ओर दृष्टि करें, उसका आलम्बन लें ध्यानमें उसीको विषय बनायें, ऐसा कुछ लोगोंका ध्यान होता है। क्या इस भाँति सत् और परिणाममें सत् और ग्राह्य अंश हुआ, सारभूत हुआ और परिणाम असार हुआ, क्या इस प्रकारसे है ?

अथ किं वागर्थद्वयमिव सम्पृक्तं सदर्थसिध्यै।
पानकवत्तन्नियमादर्थाभिव्यञ्जकं द्वैतात् ॥३५३॥

वचन व अर्थ की तरह सत् और परिणाम दोनोंको मिलकर अर्थाभिव्यञ्जक माननेकी चतुर्दशी जिज्ञासा—अब यहाँ १४ वाँ जिज्ञासु अपनी जिज्ञासा रख रहा है कि सत् और परिणाम क्या ये दोनों मिलकर अर्थकी सिद्धि कर पाते हैं ? जैसे अर्थ और वचन हुए वाक्य, शब्दरूप और अर्थ हुए वे पदार्थ जिनको वचन द्वारा वाच्य किया गया हो। तो व्यवहारमें देखते हैं कि वचन और वाच्य पदार्थ ये दोनों मिलकर एक पदार्थके अभिव्यञ्जक होते हैं, व्यवहारके प्रवर्तक होते हैं। जैसे मानो केवल वचन वचन ही तो होते दुनियामें, वाच्यभूत अर्थ नहीं होता, तो वहाँ क्या सिद्धि थी ? उस वचनका होना भी किसलिए था ? अर्थ न माने, केवल वचन हों तो उससे क्या सिद्धि है ? और मान लो अर्थ ही अर्थ हैं सभी पदार्थ, पर वचन न हों तो सिद्ध क्या हो ? अब उस अर्थ शब्दमें लें। तो वचन और अर्थ ये दोनों मिल कर और इस प्रकार मिलकर जैसे कि कई औषधियोंका मिलकर एक रस करके शर्बत बन गया हो इस तरहसे मिल गया, घुल गया, वचन और अर्थ जैसा व्यवहार बनाते हैं पदार्थमें सिद्धि करते हैं, क्या इस प्रकार सत और परिणाम ये दोनों मिल कर पदार्थकी सिद्धि करते हैं। पदार्थकी सिद्धि केवल सत कहकर नहीं प्रतीत होती है। सत् इतना कहने मात्रसे कोई कुछ नहीं समझ सकता। और परिणाम इतने मात्र से भी कुछ नहीं जाना जाता। तो सत् और परिणाम दोनों मिलकर पदार्थकी सूचना करते हैं। क्या इस प्रकार सत और परिणाममें सम्बन्ध है ?

अथ किमवश्यतया तद्वक्तव्यं स्यादनन्यथासिद्धेः।
भेरीदण्डवदुभयोः संयोगादिव विवक्षितः सिद्धयेत् ॥ ३५४ ॥

भेरी और दण्डकी तरह सत् और परिणामको मिलकर अर्थ साधक माननेकी पन्द्रहवीं जिज्ञासा—अब यहाँ १५ वाँ जिज्ञासु अपनी जिज्ञासा रख रहा

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

है कि क्या सत् और परिणाम इन दोनोंके बिना अर्थसिद्धि नहीं होती ? इस कारण सत् और परिणाम दोनोंका कथन करना आवश्यक समझा गया क्या ? जब सत् और परिणाम हो तो अर्थसिद्धि हो सकेगी। केवल सत् जुदा पड़ा रहे, परिणाम कहीं जुदा पड़ा रहे तो उ के मेल बिना भी अर्थ सिद्धि नहीं। जैसे भेरी और दण्ड, इनका जब संयोग होता है तब प्रयोजन सिद्ध होता है। किसी मन्दिरके पौरमें भेरी रखी है, दण्ड नहीं है तो उस केवल भेरीसे क्या प्रयोजन रहा ? क्यों रखा गया ? व्यर्थ जगह घेरी गई। भेरी रखनेका प्रयोजन है आवाज करना, समयपर लोगोंको चेताना समयकी सूचना देना। वह प्रयोजन तो सिद्ध नहीं हो सकता। मानलो केवल दण्ड रखा है, भेरी नहीं है, तो उसके रखनेसे भी क्या सिद्धि ? भेरी और दण्ड ये दोनों हों और उनका आवाज संयोग बनाया जाय, समयपर दण्डोंसे उस भेरीको पीटा जाय, यों भेरी और दण्डके संयोगसे विवक्षित कार्य सिद्ध होता है। सूचना देना मन्दिरमें आनेकी प्रेरणा करना जो भी प्रयोजन माना है वह सिद्ध होता है। इसी प्रकार क्या परिणाम के संयोगमें अर्थसिद्धि है, केवल सत् ही पड़ा रहे कहीं तो उससे क्या प्रयोजन अथवा केवल परिणाम ही रहे तो उससे अर्थसिद्धि नहीं। सत् और परिणाम दोनोंका सम्बंध हो, दोनों एक जगह मिलें तो उससे अर्थकी सिद्धि हुई। पदार्थ सिद्ध हो, व्यवहार सिद्ध हो, बन्ध मोक्षकी व्यवस्था बने क्या इस प्रकार सत् और परिणामके संयोगसे अर्थ सिद्धि होगी। यों इन दोनोंमें परस्पर सम्बन्ध है क्या ? यों १५ वीं जिज्ञासामें पूछा गया है।

अथ किमुदासीनतया वक्तव्यं वा यथारुचित्वान्न।
पदपूर्णन्याया्दप्यन्तरेणेह साध्यसंसिद्धेः ॥ ३५५ ॥

पदपूर्णन्यायसे सत् और परिणाम इन दोमें से किसी भी एककी उदासीनतासे कथन द्वारा अर्थ सिद्धि माननेकी सोलवीं जिज्ञासा १६ वाँ जिज्ञासु यहाँ प्रश्न कर रहा है कि सत् और परिणाम क्या ये दोनों ऐसी बातें हैं कि जिनका कथन रुचिपूर्वक न करके उदासीनता पूर्वक किया जाता है अर्थात् जैसे पदपूर्ण न्याय के अनुसार उनमेंसे किसी एकके द्वारा ही साध्यकी सिद्धि हो जाती है जैसे किसी श्लोकका कोई एक अंश बोला और एक अंश बोलकर ही एक श्लोक उसने बोल दिया तो अन्य बात तो नहीं कही गई और जिस शब्दसे बताया वह भी उदासीनता पूर्वक कही याने किसी विद्यार्थीकी परीक्षा लेना है मानो नमः श्री वर्द्धमानाय इस श्लोकको पूछा है तो उससे कहा कि बोलो निर्धूत कलिलात्मने इस श्लोककी पूर्ति करो, तो इस पदको सुनकर वह पूरा श्लोक बोल देगा। तो यहाँ निर्धूत वाला पद बोलना कोई मुख्य न था, वह उदासीनता पूर्वक बोला गया, लड़केकी बुद्धि जितनी है साध्य तो यह है, समझना तो यह है। अब उस श्लोकमें कोई भी शब्द बोलकर पूछा जा

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

सकता है। तो जो भी शब्द पूछा गया उस शब्दको उदासीनता पूर्वक लेगा, मानो यह नहीं तो और भी बोल सकता था। तो उसमें साध्य तो इतना ही है कि उसकी बुद्धि की परीक्षा करना है, अब परीक्षक चाहे दूसरा चरण बोलकर पूछे अथवा तीसरा या अन्तिम बोलकर पूछे जो भी बोलेगा वह उदासीनता पूर्वक कहलायेगा तो क्या इसी तरह सत् और परिणामकी बात है? जैसे सत् कहा तो परिणाम झट समझमें आ गया और सत् और परिणाम दोनों मिलकर पदार्थ कहलाते हैं यह भी समझमें आ गया तो सत् कहकर समझा गया तो कभी परिणाम कहकर भी समझा जायगा। तो जो साध्य है जो पदार्थकी सिद्ध करना इष्ट है उसको बतानेके लिए। सत्को बोल दे चाहे पर्याय नामसे बोल दे, उदासीनता पूर्वक बोला जायगा क्या इस प्रकार सत् और परिणामकी बात है। यह १६ वें जिज्ञासुने १५ वां प्रश्न किया है?

अथ किमुपादानतया स्वार्थं सृजति कश्चिदन्यतमः।
अपरः सहकारितया प्रकृतं पुष्णाति मित्रवत्तदिति ॥३५६॥

मित्रोंकी तरह सत् और परिणाम को उपादान व सहकारीरूप माननेकी सत्रहवीं जिज्ञासा—अब यहाँ १७ वां जिज्ञासु पूछ रहा है कि क्या सत् और परिणामका ऐसा सम्बन्ध है कि कोई एक उपादान कारण होकर अपने कार्यको करता है और दूसरा सहकारी कारण बनकर उस प्रकृत कार्यको पुष्ट करता है क्या इस तरहकी बात सत् और परिणाममें है याने जिस बातकी सिद्धि करना है उस बातको हम सिद्ध करनेमें सत् शब्द तो मुख्य हुआ, सत् कहनेसे एक बातकी सिद्धि की गई कि पदार्थ है और फिर परिणाम कह करके कि वाच्यकी सिद्धिमें सहाय मिले जैसे कि दो मित्र हों तो काम करने वाला एक ही मित्र होता है। दो मित्र हों चाहे कितनी ही समान बुद्धिके हों फिर भी उनमें मुख्य और गौण हो ही जायगा। दो मित्र मिलकर कोई काम करते हों तो चाहे वे दोनों ही समान बुद्धि वाले हैं और पुरुषार्थ भी उनका समान है लेकिन प्रकृतिकी बात है कि उसमें कोई एक मुख्य होगा दूसरा सहकारी रूप होगा। तो जिस तरह एक कार्यको एकने मुख्य रूपसे किया दूसरेको सहकारी बनाकर किया, क्या, इस तरह जो वाच्य है जो कार्य बताना है उसकी सिद्धि तो सत् और परिणाममेंसे एकने मुख्यतया की, दूसरेका सहकारी बनकर की, क्या इस तरह सत् और परिणाम दोनों मिलकर अर्थकी सिद्धि करते हैं। सत् और परिणाम ये दो एक बातको बताते हैं। एक पदार्थका स्वरूप झलकाना है तो काम एक हुआ लेकिन प्रकृतिकी बात है कि दोमेंसे कोई एक मुख्यरूपसे समझाने वाला होगा, अर्थात् दूसरा सहकारीरूपसे होगा क्या इस प्रकार सत् और परिणाम कार्यकी सिद्धि उसमें मुख्य और गौणरूपसे किया करते हैं? यह १७ वाँ प्रश्न हुआ।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

शत्रुवदादेशः स्यात्तद्वत्तद् द्वैतमेव किमिति यथा ।
एकं विनाश्य मूलादन्यतमः स्वयमुदेति निरपेक्षः ॥३५७॥

शत्रुकी तरह सत् और परिणामको एक नष्ट कर दूसरेको उदित माननेकी अठारहवीं जिज्ञासा अब १८ वाँ जिज्ञासु पूछ रहा है कि क्या सत् और परिणाममें शत्रु की तरह द्वैत भाव हैं ? जैसे शत्रुमें कोई एक दूसरे का समूल नाश करके अपना अभ्युदय प्रकट करते हैं शत्रुकी यही रीति है। कोई सबल शत्रु निर्बलका समूल नाश करके उसके राज्यपर अपना पैर रखे, क्या इस तरह सत् और परिणाम इनमेंसे कोई भी एक दूसरेका नाश करके अपना प्रभुत्व रखे क्या इस तरहके सत् और परिणाममें विरोध जैसी बात है ? इस जिज्ञासु को ऐसा प्रश्न करनेका यों अवसर मिला कि बात भी यही देखी जाती। जब द्रव्य दृष्टिसे कोई चर्चा करता है तो पर्याय का वहाँ नाम भी नहीं दिखता। अगर वह बड़ी गहरी और परेशानीके साथ द्रव्य दृष्टि कर रहा है तो एक पर्याय दृष्टिमें कोई बात नजर नहीं आती। लोकमें विवाद क्यों होता कि नजर तो किए हुए है द्रव्य दृष्टिकी और बात मिलायेंगे पर्याय दृष्टिकी जैसे जब देखा कि द्रव्य पर्यायोंका पुञ्ज है। द्रव्यमें एकके बाद एक एक पर्यायें होती हैं, कुछ भी हुआ हो जो होना है सो होता है उन पर्यायोंका पुञ्ज द्रव्य है। देखिये ! यह सब एक द्रव्यकी दृष्टिमे नजर आ रहा है अब उस दृष्टिमें अनन्त पर्यायें हैं और एक पर्यायके बाद दूसरी पर्याय उत्पन्न होती है बस यही धारा द्रव्यमें है और यही उसकी दुनिया है। चर्चा यह कर रहे, दृष्टि कर रहे द्रव्य दृष्टिकी। अब उस ही द्रव्य में रहकर यों करें कि दूसरा कोई निमित्त नहीं अथवा अमुक इतना ही निमित्त मात्र किसी भी प्रकारकी चर्चा करना यह उस दृष्टिसे अलग होकर बात करनेमें था लेकिन एक दृष्टिमें रहे और अन्य दृष्टिका समावेश करें तब विवाद है अब इस ईमानदारीमें यह बात नजर आयी कि जब जिस दृष्टिसे देख रहे हैं उस दृष्टिमें ही दिख रहा है, अन्यका तो लोप है। तो द्रव्य दृष्टिमें तो दिखता है सत् और पर्याय दृष्टिमें दिखता परिणाम। ये दोनों भिन्न-भिन्न दृष्टिके विषय हैं। तो यहाँ भी ऐसा होना चाहिए कि जब द्रव्य दृष्टिको कुछ निरखा जा रहा है तब वहाँ अन्यका लोप है। तो क्या इसी प्रकार सत् और परिणामकी बात है कि उनमेंसे एक दूसरेका समूल नाश करके स्वयं मुख्य रूपसे अभ्युदित होता है। अब १९ वाँ जिज्ञासु जो कि इस प्रसंगका अंतिम प्रश्न है उसका करने वाला पूछता है।

अथ किं वमुख्यतया विसन्धिरूपं द्वयं तदर्थकृते ।
वामेतरकरवर्त्तितरज्जूयुग्मं यथास्वमिदमिति चेत् ॥३५८॥

वामेतरकरवर्तिरज्जूयुग्मकी तरह सत् और परिणामकी विमुखतासे

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

अर्थ सिद्धि माननेकी अन्तिम जिज्ञासा—यहाँ जिज्ञासु पूछ रहा है कि सत् और परिणाम क्या परस्पर विमुखतासे अनमिल होकर ही अपना कार्य करते हैं। कार्य है पदार्थकी सिद्धि करना पदार्थमें अर्थक्रिया बनना व्यवहार बनना, कार्य होना ये सब बातें सत् और परिणाम करता तो है दोनों लेकिन क्या विमुखतासे करता है, या अनमिल रहकर करता है? याने अनमिल रहकर भी दो मिलकर कार्य करते हैं, ऐसी भी घटना होती है। सुननेमें ऐसा लगता कि दो आदमी मिलकर एक कार्य करें, और विमुखतासे करें, अनमिल रहकर करें और वह एक कार्य बन जाय यह कैसे सम्भव है? लेकिन उदाहरण देखिये! दहीको मथानीसे मथकर घी निकाला जाता है, तो जब दही मथा जाता है मथानीसे तो उसमें लगी हुई दो रस्सियाँ हैं याने रस्सी के दो ओर छोर हैं, वे अनमिल होकर ही काम कर पाती हैं। यदि एक रस्सी पूर्वको खिचती है तो दूसरी रस्सी पश्चिमको खिचती। एक छोरका मुख है मथने वालेकी ओर और एकका मुख है उससे उल्टी ओर। तो एक रस्सीका एक छोर खिच रहा है मथने वालेकी ओर एक छोर मथने वालेकी ओरसे भाग रहा है। दोनों ही छोर एक दूसरेसे उल्टे काम कर रहे हैं एक छोरने पूरब दिशाकी ओर गति की और एक छोरने पश्चिम दिशाकी ओर गति की। अनमिल होकर ऐसी विमुखतासे देखो वहाँ रस्सीके दोनों छोरोंने मथनेका काम किया और सारभूत घी निकाल दिया तो क्या इसी तरह सत् और परिणाम ये दोनों, द्रव्य पर्यायें ये दोनों क्या परस्पर विमुखता रखकर परस्परमें अनमिल रहकर पदार्थमें अर्थ क्रिया करते हैं? अनमिल रहनेकी बात भी जिज्ञासुको यों सूझी कि द्रव्यका स्वरूप जो है उससे विपरीत पर्यायका स्वरूप है। द्रव्य शाश्वत है तो पर्याय अनित्य है। द्रव्य अपादानभूत है तो पर्याय उदित होने वाली चीज है एक ध्रुव है वह अध्रुव है, वह एक है तो पर्याय अनेक हैं। बहुत सी बातें विरोधरूप हैं इस कारण अनमिल रहकर कार्य करनेकी बात किसी जिज्ञासुको सूझ सकती है और इस सूझमें यह अन्तिम जिज्ञासु प्रश्न करता है कि जैसे बायें और दायें हाथमें रहने वाली रस्सीके दो छोर परस्पर विमुखता रखकर काम करते हैं उसी तरह क्या सत् और परिणाम भी एक दूसरेसे अनमिल रहकर अपना परिणाम करते हैं, क्या इस तरह सत् और परिणामका जोड़ा है क्या सत् और परिणामका इस तरहसे सम्बन्ध है? यहाँ तक १९ प्रकारकी जिज्ञासायें प्रकट हुई। अब सत् और परिणामका सम्बन्ध परस्परमें किस प्रकार है सो बतावेंगे।

नैवमदृष्टान्तत्वात् स्वेतरपक्षोभयस्य घातित्वात्।
नाचरते मन्दोऽपि च स्वस्य विनाशाय कश्चिदेव यतः ॥३५९॥

सत् और परिणामके सम्बन्धमें १९ जिज्ञासाओंका संक्षेपमें समाधान

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

घान अब उन समस्त जिज्ञासावोंका जो कि ऊपर बतायी गई हैं क्रमशः समाधान करते हैं। देखिये आने अपने पक्ष की पुष्टिमें जिन जिन जिज्ञासाओंने जो जो दृष्टान्त दिये हैं वे अपने और दूसरे के पक्षका घात करने वाले हैं। लेकिन यह बड़े आश्चर्य की बात है कि कितना भी मंदबुद्धि पुरुष हो वह अपने विनाशके लिए तो कोई उपाय नहीं बनाता, लेकिन इन जिज्ञासुओंने जो दृष्टान्त दिया है उनमें ही वस्तुकी यथार्थ सिद्धि होती है। जो पक्ष रखा है उसका उसमें विघात है। सो यह आश्चर्यकी बात है कि स्याद्वाद शासनका परिज्ञान न होनेसे कोई भी एकान्त आग्रही अपने पक्षकी सिद्धि करनेमें जो भी उदाहरण देगा, दृष्टान्त देगा, वह उसके विरुद्ध ही पड़ेगा। कारण यह है कि जगतमें कोई भी पदार्थ एकान्त स्वरूप नहीं है, सब अनेकान्तात्मक हैं। उदाहरण किसका देगा? उदाहरण सहित पक्षकी सिद्धिके लिए तो सही मिल जायगा मगर मिथ्या पक्षकी सिद्धिके लिए अन्य जो कुछ भी उदाहरण दिये जायेंगे वे उस पक्षका विघात करने वाले ही होंगे। अब इन सब जिज्ञासुओंके आने अपने पक्ष में दिए गए दृष्टान्त जैसे उनके पक्षका विघात करते हैं? सो यह बात अब क्रमशः बताई जायगी। उन सबमें प्रथम पक्ष था वर्णोंकी तरह सत और परिणामका एक साथ रहना, परन्तु उनका क्रमसे कहा जाना जैसे क ख ग वर्ण पुस्तकमें, ज्ञानमें सबके सब मौजूद हैं लेकिन उनका कहना क्रमसे होता है। इसी प्रकार पदार्थमें सत् और परिणाम दोनोंके दोनों मौजूद हैं लेकिन उनका कथन क्रमसे ही होगा, एक साथ नहीं कहे जा सकते। और इस जिज्ञासुने यह कारण बताया था जो सिद्धान्तमें अनु-भय नामका तृतीय भङ्ग अवक्तव्य नामका बताया गया तो सत और परिणाम ये अवक्तव्य क्यों हैं? बात भली लग रही है, जिज्ञासुका कहना ठीक जच रहा कि बात दोनों पदार्थमें हैं सत और परिणाम, मगर उनका कथन क्रमसे ही हो सकेगा। किंतु क ख आदिक वर्णोंका और उन ध्वनियोंका जो उदाहरण दिया है उनसे अपने पक्ष की सिद्धि करना चाहा है, उसमें कुछ अयुक्तता है। उसी बातको अब देखियेगा कि पहिला जिज्ञासु अपना प्रश्न कैसे अयुक्त बना रहा है?

तत्र मिथस्तापेक्षधर्मद्वयदेशिनः प्रमाणस्य।
मा भूदभाव इति न हि दृष्टान्तो वर्णपंक्तिरित्यत्र ॥ ३६० ॥

प्रथम जिज्ञासाके समाधानमें वर्णपङ्क्तिके दृष्टान्तकी अयुक्तताका कथन

प्रथम जिज्ञासुने यह जिज्ञासा प्रकट की थी कि पदार्थमें सत और परिणाम क्या इस तरह स्वतंत्र रूपसे रहते हैं जैसे कि क ख आदिक वर्णोंका विन्यास यह स्वतंत्र है। उसमें यह बात तो नहीं है कि पहिले क बना था फिर ख बना। बोलनेमें अवश्य क्रमसे आता है, किंतु उनकी रचना तो एक समान एक साथ है। उसमें क्रम नहीं है कि दुनियामें पहिले क बना था फिर ख फिर ग। सब वर्ण अनादि सिद्ध हैं। सबकी

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

समान स्थिति है पर उनका बोलना क्रमसे होता है इसी प्रकार सत् और परिणाम दोनों एकसाथ हैं किन्तु उनका कथन क्रमसे होता है क्या इस तरह कि सत् और परिणाममें अस्तित्व की स्वतंत्रता है, इस जिज्ञासाके समाधानमें अस्तित्वकी स्वतन्त्रता है, इस जिज्ञासाके समाधानमें कहते हैं कि सत् और परिणाम ये दोनों सापेक्ष्य हैं, सत् के बिना परिणाम नहीं परिणामके बिना सत् नहीं और इस सापेक्ष दोनों धर्मोंका विषय करने वाला है प्रमाण । प्रमाण दृष्टिसे सत्त्व और पर्याय, द्रव्य और ये दोनों सिद्ध होते है । तो द्रव्य पर्याय दोनो को विषय करने वाले प्रमाणका अभाव करना किसी इष्ट नहीं हो सकता, इस कारणसे जो वर्ण पंक्तिका दृष्टान्त दिया है और दृष्टान्त दिया है और दृष्टान्त देकर यह सिद्ध किया है कि सत् और परिणाम दोनो स्वतंत्र हैं, पर उनका व्यक्ति कथन क्रमसे होता है सो ठीक है । जो जिनको प्रमाणका अभाव इष्ट नहीं है उनको यह मानना चाहिए कि सत और परिणाम सापेक्ष धर्म है स्वतंत्र धर्म नहीं है । जैसे कि वैशेषिक लोगोंने द्रव्यको भिन्न और कर्मको भिन्न माना है । कर्म क्या है ? परिणाम और परिणाममें गुण भी है । वैशेषिक लोगोंने द्रव्य को भिन्न और कर्मको भिन्न माना है । कर्म क्या है ? परिणाम और परिणाममें गुण भी है । वैशेषिक द्वारा माना गया और भी आता है । जो गुण पर्यायात्मक है वह परिणाम है । और क्रिया सारी ही परिणाम है । तो जैसे वैशेषिक जनोंने सत्त्वको द्रव्य रूप मान रखा और परिणामको गुण कर्म आदिक रूप मान रखा और सब स्वतन्त्र माने गए । भले हो फिर अर्थक्रियाकी व्यवस्था समवाय सम्बन्धसे बनाई गई है लेकिन मूलमें उन धर्मोंको स्वतन्त्र माना है । इस प्रकारसे सत् और परिणाम स्वतंत्र नहीं हैं, स्वरूप उनका अवश्य जुदा है, पर सत् और परिणाम सापेक्ष है । वस्तु एक है, उसी एक ही वस्तुमें सामान्य दृष्टिसे देखते हैं तो सत्त्व विदित होता है । विशेष दृष्टिसे निरखते हैं तो पर्याय विदित होती है । तो सत् और परिणाम दोनों सापेक्ष हैं अतएव वर्ण पंक्तिका दृष्टान्त यहाँ उपयुक्त नहीं होता कि जैसे क ख ग आदिक स्वतंत्र हैं पर उनकी ध्वनि क्रमवर्ती है यों सत और परिणाम स्वतंत्र हैं, पर उनका कथन क्रमसे है, सो इस प्रकारका पार्थक्य नहीं है ।

अपि च प्रमाणाभावे न हि नयपक्षः क्षमः स्वरक्षायै ।
वाक्यविवक्षाभावे पदपक्षः कारकोऽपि नार्थकृते ॥३६१॥

वाक्यविवक्षाके अभावमें पदपक्षकी अर्थसिद्धिमें अक्षमताकी तरह प्रमाणके अभावमें नय पक्षकी स्वरक्षामें भी अक्षमता—उक्त गाथामें बताया गया है कि जिसको सापेक्ष सत् और परिणाम इन दो धर्मोंका विषय करने वाले प्रमाणको सत्त्व मानना इष्ट है, अभाव नहीं चाहते उनको वर्ण पंक्तिके दृष्टान्तकी तरह सत् और परिणामको स्वतंत्र मानना युक्त नहीं है । यदि कोई यह कहे कि हमें

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

प्रमाणका अभाव भी इष्ट है। प्रमाण नहीं रहता तो न रहो, सो ऐसा मनमाना मन्तव्य न डालकर उसी प्रमाणका अभाव माननेपर कोई काम न चल सकेगा। जैसे कि वाक्य विवक्षा न माननेपर केवल पशु पक्षी कोई कार्य करनेमें समर्थ नहीं, कोई एक ही शब्द बोला उस शब्दको बोलकर ही लोग पूरा वाक्य समझ गए। किसी श्लोकका कोई अंश बोला गया और समझने वालेमें पूरा श्लोक समझ लिया तो वहाँ यह न समझना चाहिए कि केवल एक पदसे ही प्रयोजनकी सिद्धि हुई है। ज्ञानमें प्रतीतिमें पूरा वाक्य है पूछने वालेके भी चित्तमें और उत्तर देने वालेके भी चित्तमें, तो उस वाक्यकी विवक्षा है, उस पूर्ण श्लोककी बात कहनेकी बात चित्तमें है, ज्ञानमें हैं तब जाकर कोई एक पद बोला गया उसके माध्यमसे वह अर्थ सिद्ध होगा लेकिन वाक्य विवक्षाका अभाव हो तो पदका बोलना कोई अर्थ सिद्ध करनेमें समर्थ नहीं है तो इसी प्रकार वाक्यकी तरह विशाल तो है प्रमाण और पदकी तरह है एक देश नय तो कभी किसी नयके प्रयोगसे समस्त पदार्थकी सिद्धि समझ ली गई, समझ लीजिए, लेकिन जिन्होंने समझा है उन्हें प्रमाणके समस्त विषयका परिज्ञान था तब जाकर एक नय पक्षसे भी उसने सब कुछ समझ लिया यदि प्रमाणका परिज्ञान न हो तो एक नय पक्षसे सब बातें नहीं समझी जा सकती।

सप्तभङ्गीके प्रत्येक भङ्गमें अन्यसापेक्षताकी ध्वनि—सप्तभङ्गीमें एक भङ्ग बोलकर सारी बात समझ ली जाती है कहीं वहाँ यह बात नहीं है कि एक भङ्ग में केवल एक ही बात है दूसरी है ही नहीं। मुख्यताकी बात है। उसमें अपेक्षा दृष्टि लगनेके कारण, उस ज्ञानीके चित्तमें सारी बातें समायी हुई हैं। तो जो वस्तुको नित्या-नित्यात्मक समझ बैठे हैं उनको अगर कोई कहे कि द्रव्य दृष्टिसे नित्य है तो इतने कथनसे वह सब स्वरूप समझा गया। कब समझा गया? जब प्रमाणसे उसे समस्त स्वरूपका ज्ञान था। तो यों ही समझिये कि जिस वाक्य विवक्षाके अभावमें किसी पद पक्षका प्रयोग अर्थ सिद्धिके लिए समर्थ नहीं है इसी प्रकार प्रमाणके अभावमें कोई सा भी नय पक्ष अपनी रक्षाके लिए समर्थ नहीं है, इसी कारण सत् और परिणाम इन दोनोंको यदि सापेक्ष नहीं माना जाता और प्रमाणसे इसका एक ही वस्तुमें परि-ग्रहण नहीं होता तो अलग अलग सत् और परिणाम कह देनेपर कभी पदार्थकी सिद्धि नहीं हो सकती।

सत् और परिणामको स्वतन्त्र स्वतन्त्र दो पदार्थ माननेकी अयुक्तता—यों तो अनेक दार्शनिकोंने माना है सामान्य उनका पूरा पदार्थ है। अब सामान्य पदार्थ बोलकर सिद्धि क्या कर लेगा वह। अथवा कर्म विशेष जो पूरे पूरे स्वतंत्र पदार्थ हैं उन दार्शनिकोंके मतमें तो केवल एक प्रयोगसे वह क्या सिद्ध कर सकता है? बात तो यों थी कि सत् एक है। उसमें जो शक्ति है उसका नाम गुण, है उसकी जो परिणति है उसका नाम कर्म है। उसमें जो सजातित्व है उसका नाम सामान्य है।

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

उसमें जो विशिष्ट स्थिति है उसका नाम विशेष है। बस काम बन गया। अलग अलग कोई कर्म सामान्य विशेष मानना तो एक भेदहठकी बात है। अब जैसे वहाँ कोई किसी एक सामान्य विशेषादिक पदार्थको ही मानकर रहे, भेद करके रहे तो किसी वस्तुकी सिद्धि नहीं है। तो यों ही सत् और परिणाम दोनोंको स्वतंत्र मानकर सत्का पक्ष ले वह नयपक्ष, पर्यायका पक्ष ले वह नयपक्ष तो प्रमाणके अभावमें कोई सा भी नयपक्ष अपनी रक्षा करनेके लिए समर्थ नहीं हो सकता, इस कारण प्रमाणका अभाव करने वाला तो किसी भी प्रयोजनकी सिद्धि न कर सकेगा।

संस्कारस्य वशादिह पदेषु वाक्यप्रतीतिरिति चेद्वै ।
वाच्यं प्रमाणमात्रं न नया ह्युक्तस्य दुर्निवारत्वात् ॥३६२॥

संस्कारवश पदोंमें वाक्य प्रतीति माननेपर नयोंके अवाच्यत्वकी व प्रमाणमात्रके वाच्यत्वकी सिद्धिका प्रसङ्ग—उक्त गाथामें यह बताया गया है कि वाच्य विवक्षाके अभावमें पद प्रयोग अर्थ सिद्धि करनेमें समर्थ नहीं है। तो उसके उत्त में शङ्काकार यदि यह कहे कि संस्कारके वशसे पदोंमें ही वाक्यकी प्रतीति हो जायगी। चूंकि वह समझता है सुनने वाला और उसे उन समस्त ज्ञानोंका संस्कार लगा है उस संस्कारकी वजहसे पदोंमें वह वाक्यकी प्रतीति कर लेगा। ऐसा कथन भी युक्तिसंगत नहीं है क्योंकि संस्कारके वशसे पदोंमें वाक्य प्रतीति माननेके मंतव्य पर होगा, क्योंकि नयोंका अभाव हो जायगा। नया न रहेगा और केवल एक प्रमाण ही वाच्य बन जायगा। तात्पर्य यह है कि किसी विद्वानने संस्कारकी वजहसे पदोंमें वाक्यकी प्रतीति करली, अब यह बात सभी जगह लगायी जा गी, अर्थात् अब यह नियक बन बैठा कि पदमें ही वाक्यकी प्रतीति हो जाती है तो पद तो है एक नयका प्रतीक और वाक्य है प्रमाणका प्रतीक। अब जब पदोंमें वाक्य प्रतीत होने लगे तो वाक्यकी अब क्या आवश्यकता नहीं? पद ही कार्यकारी बन गया, वाक्य कुछ न रहे, यों ही समझिये कि यदि सत् और प्रमाणका ग्रहण करने वाले नय पक्षने ही अर्थ सिद्धि कर दिया तो अब प्रमाणकी क्या आवश्यकता रही? एक बात, दूसरी बात यह है कि संस्कारकी वजहसे अगर पदोंमें वाक्य प्रतीति है तो संस्कारसे अंतरङ्गमें वाक्य ही तो ग्रहणमें आया। पदने तो केवल अर्थ सिद्धि नहीं की, इसी तरह वाक्य मुख्य रहेगा। फिर पद कुछ न रहे। यों तो संस्कारकी वजहसे कुछ भी कोई न बोले तो विद्वान सारी समझ रखता है। ऐसी स्थितिमें भाव यह बनेगा कि केवल प्रमाण ही वाच्य रह गया, नय वाच्य न ठहरेगा। तब प्रमाण ही कहना चाहिए। नयोंका कथन फिर न कहना चाहिए, पर ऐसा मंतव्य तो कुछ ठीक नहीं और नय दोनोंकी व्यवस्था है। केवल प्रमाण ही कोई माने और नय न माने तो प्रमाण भी कोई न बन सकेगा, न व्यवहार चल सकेगा। कोई नय ही माने प्रमाण नहीं मानता तो उससे

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

भी अर्थ सिद्धि नहीं है, न व्यवहार चल सकेगा। तब सत् और परिणाममें परस्पर सापेक्षता समझना चाहिए और उनके ग्रहण करने वाला प्रमाण है उन्हें वस्तुमें स्वतंत्र स्वतंत्र न समझना चाहिए।

अथ चैवं सति नियमाद् दुर्वारं दूषणद्वयं भवति।
नयपक्षच्युतिरिति वा क्रमवर्तित्वाद् ध्वनेरहेतुत्वम् ॥ ३६३ ॥

केवल प्रमाणपक्ष माननेपर दो दूषणोंका प्रसङ्ग—उक्त कथनमें बताया है कि संस्कारसे पदोंमें वाक्य प्रतीति माननेपर केवल प्रमाण मात्र वाच्य हो जायगा, तो इसपर यदि शङ्काकार यह कहे कि केवल प्रमाण पक्ष ही वाच्य बनता है तो बनने दो। उसके उत्तरमें यह समझना चाहिए कि केवल यदि प्रमाण पक्ष ही माना जाता है नयोंका अभाव कर दिया जाता है तो इस मंतव्यमें दो दूषण आते हैं—प्रथम तो यह कि नय पक्षका सर्वथा अभाव हो जाता है। स्पष्ट ही मानते हैं कि केवल प्रमाण पक्ष ही रहा आये तो नयपक्ष नहीं ठहरता। और यदि कोई यह ही हट करे कि नय पक्ष भी नहीं ठहरता तो न ठहरे ! तो नयपक्ष बिना कोई गति भी नहीं हो सकती। कोई कुछ कथन करेगा तो किसी एक दृष्टिमें ही तो कथन करेगा। सब दृष्टियोंसे जो बात समझी गई है वह कथनमें नहीं आ सकती। दूसरा दोष यह है कि फिर जो इस जिज्ञासामें ध्वनिको क्रमवर्ती बताना यह हेतुमें कहा है तो ध्वनि क्रमवर्ती होती है यह हेतु फिर समीचीन नहीं ठहरता। ध्वनि अहेतुक बन जायगी अथवा यह हेतु विपरीत बन जायगा। तब मानना यह चाहिए कि सत् और परिणाम ये नय दृष्टिसे वस्तुमें निरखे गए धर्म हैं, ये स्वतंत्र धर्म नहीं हैं। उत्पाद व्यय ध्रौव्यात्मक वस्तु होती है। कहीं पदार्थमें उत्पाद व्यय ध्रौव्य स्वतन्त्र नहीं हुआ करते। तो सत् परिणामको स्वतंत्र सिद्ध करनेके लिए प्रथम जिज्ञासुने जो क ख आदिक वर्णोंका उदाहरण दिया वह युक्तिसङ्गत नहीं कहा जा सकता।

विन्ध्यहिमाचलयुग्मं दृष्टान्तो नेष्टसाधनायालम्।
तदनेकत्वे नियमादिच्छानर्थक्यतोऽविवक्षश्च ॥ ३६४ ॥

विन्ध्याचल हिमाचलकी तरह सत् और परिणामको स्वतन्त्र स्वतन्त्र व विवक्षानुसार मुख्य गौण माननेकी शङ्काका समाधान—शङ्काकारने यह शङ्का प्रकट की थी कि वस्तुमें सत्त्व और परिणाम क्या इस भांति हैं जैसे कि विन्ध्याचल और हिमाचल पर्वत। विन्ध्याचल बिल्कुल प्रतिपक्ष दिशामें है और हिमाचल उत्तर दिशामें है। तो जैसे ये दोनों स्वतन्त्र हैं क्या इस प्रकारसे सत्त्व और परिणाम ये दोनों स्वतंत्र सत्त्व हैं ? अर्थात् निश्चय नयका विषयभूत जो द्रव्य स्वरूप

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

बताया गया वह और पर्यायार्थिक नयका विषयभूत जो परिणाम बताया गया वह क्या ये दोनों स्वतंत्र हैं ? जैसे कि मीमांसक जन गुणपर्याय द्रव्य सबको स्वतंत्र मानते हैं, परिपूर्ण स्वयं स्वतंत्र पदार्थ है इस तरहसे स्वतन्त्रता बतानेके लिये जो विन्ध्याचल और हिमाचल इन पर्वतोंका दृष्टान्त दिया वह भी इष्टसिद्धि करनेके लिए समर्थ नहीं है क्योंकि जब ये नियमसे स्वतंत्र हैं तब इनमें किसीको गौण किसीको मुख्य कहना यह निरर्थक बात है। जो स्वतंत्र हैं और उनमें विवक्षावश किसीको मुख्य और किसीको गौण बनाया तो भले ही विवक्षा कुछ करले किन्तु वस्तुतः उनमें एक मुख्य हो एक गौण हो सो बात नहीं। वे दोनों अपने आपमें स्वतंत्र हैं, और अपना पूरा सत्त्व लिए हुए हैं, सत् और परिणाममें कथंचित् ही भेद माना गया है। वस्तुतः भेद नहीं है, जैसे चौकी भींट आदिकमें प्रकट भेद है, ऐसा प्रकट भेद सत्त्व और परिणाममें नहीं है। वस्तु एक है। जब उसे द्रव्य दृष्टिसे देखा तो उसका शाश्वत रूप नजरमें आया, जब पर्याय दृष्टिसे देखा तो उसकी पर्यायरूप अवस्थारूप नजरमें आयी, पर अवस्था और वह शाश्वत द्रव्य स्वतंत्र (न्यारा) हो ऐसा नहीं है और विन्ध्याचल हिमाञ्चल जिनका दृष्टान्त दिया गया है वे दोनों स्वतंत्र हैं और कथंचित अभेदरूप रहने वाले सत् और परिणामकी बात समझनेके लिए अत्यन्त भिन्न, विन्ध्याचल हिमाञ्चलका दृष्टान्त युक्त नहीं है।

नालमसौ दृष्टान्तः सिंहः साधुर्यथेह कोऽपि नरः।
दोषादपि स्वरूपासिद्धत्वात्किल यथा जलं सुरभि॥ ३६५॥

सिंह साधुकी तरह सत् परिणामको विशेषणविशेष्यरूप माननेकी शङ्काका समाधान—सिंह साधुका दृष्टान्त भी प्रकृत सत् परिणामको बातको सिद्ध करनेमें समर्थ नहीं है। तीसरी जिज्ञासा साधु सिंहका दृष्टान्त बताया था कि जैसे किसी सज्जनका नाम सिंह है और साधु नाम है क्या उसी प्रकार उसी एक पदार्थका सत् हो और परिणाम नाम हो क्या इस प्रकार इनमें विशेषणविशेष्य भाव है अथवा साधु सिंह भी कह देते हैं। यह तो सिंह है अर्थात् श्रेष्ठ है सिंहवत् शूरवीर है। तो साधु हो गया विशेष्य सिंह होगया विशेषण अथवा एक हीके दो नाम रखे हों तो साधु और सिंह ये दोनों हो गए विशेषण। सो कोई एक विवक्षित हो विशेष इस तरहसे सत् और परिणामकी बात नहीं है कि इसमें एक विशेषण हो, एक विशेष्य हो। यहां दृष्टिमें दो धर्म लिए जा रहे हैं – द्रव्य और पर्याय। अब अनन्त शाश्वतरूप जो सहज स्वरूप है और उसमें जो पर्याय उत्पन्न होती है इन दोनोंमें किस को विशेषण कहेंगे और किसको विशेष्य कहेंगे। तो यह दृष्टान्त इष्ट सिद्धि नहीं करता बल्कि इसमें स्वरूपासिद्ध दोष है। सत् और परिणाम ये दोनों धर्म हैं। दो धर्मोंकी बात समझानेके लिए जो दृष्टान्त दिया है वह दो धर्म वाला है ही नहीं। तो

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

स्वरूपासिद्ध दोष हो गया। जिसकी चर्चा कर रहे हैं वह स्वरूप ही वहाँ नहीं है। जैसे कहा कि जल स्वरभि है तो ऐसा माननेमें स्वरूपासिद्ध दोष है। यह उदाहरण दिया जा रहा है नैयायिक सिद्धान्तके अनुसार। नैयायिक सिद्धान्तमें पृथ्वीको गंधवान माना है जलको रसवान माना है, अग्निको रूपवान और वायुको स्पर्शवान माना है ये चार जो भौतिक तत्त्व हैं—पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु। वनस्पति, पेड़, काठ वगैरह पृथ्वीमें शामिल हैं, क्योंकि जो कठिन हो वह सब पृथ्वी है। जैसे पृथ्वी कठोर है तो काठ भी कठोर है। तो पृथ्वीको वनस्पति तत्त्वमें लिया है न्यायदर्शनमें। जैसे ये चार तत्त्व हैं तो इनका स्वरूप एक एक धर्मको लिए हुए है। तो जलमें सुगन्ध नहीं है। जलमें केवल रस गुण बताया गया फिर भी लोग बोलते हैं कि यह सुगंधित है। जलका स्वरूप ही नहीं गंध और फिर यह कहना कि यह स्वरूपासिद्ध है। जो बात नहीं है उसका बताना। इस प्रकार सिंह और साधुमें धर्मत्व है ही नहीं फिर भी धर्मके दृष्टान्तमें उसका उदाहरण देना यह स्वरूपासिद्धकी बात है। तो ५ दृष्टांत में स्वरूपासिद्ध दोष है यह बात निर्णीत है असिद्ध नहीं है, क्योंकि और कोई दृष्टांत दीजिए। दो धर्मोंकी अपेक्षा न कहकर सिंह और साधुका जो रूढ़िवश व्यवहार बताया है वह स्वरूपासिद्ध है। दो धर्म हुए किसी वस्तुमें और फिर उन दो धर्मोंका दृष्टांत देकर सत् और परिणामकी बात सम्हालें तो वह कुछ विचारणीय भी है।

नासिद्धं हि स्वरूपासिद्धत्वं तस्य साध्यशून्यत्वात्।
केवलमिह रूढिवशादुपेक्ष्य धर्मद्वयं यथेच्छत्वात् ॥ ३६६ ॥

सिंह साधु दृष्टान्तकी प्रकृतमें स्वरूपासिद्धता—दृष्टान्त जो साधु सिंह का दिया है उसमें स्वरूपासिद्ध कहा है, ये दोनों धर्म नहीं हैं। एक व्यक्ति हो और उसके ये दो धर्म हुए सो बात नहीं। जैसे एक पदार्थमें नित्यत्व और अनित्यत्व ये दो धर्म हैं अब उन दो धर्मोंका क्या विशेष्य विशेषण भावरूपसे कह देंगे कि नित्यत्व अनित्यत्वका विशेषण हुआ या नित्यत्व अनित्यत्व विशेष हुआ? इन दोनोंमें विशेषण रूपसे प्रयोग नहीं किया जा सकता। तो यों ही सिंह और साधु जब दो धर्म नहीं हैं तो इसका दृष्टान्त दो धर्मोंमें सम्बन्ध बतानेके लिये संयुक्त नहीं हो सकता। मनुष्य में सिंहत्व धर्म नहीं, साधुत्व धर्म नहीं, फिर भी व्यवहारमें कभी सिंह कहते, कभी साधु कहते। यदि सत् और परिणामको वस्तुमें सिंहपना और साधुपनाकी तरह एक भिन्न मान लिया, क्या होता विशेषण विशेष्य न होनेपर भी विशेषण विशेष्यकी तरह होता होता तो कदाचित् दृष्टान्त ठीक समझा जाता। लेकिन वस्तु तो सत् परिणामात्मक है, उसमें न सत्त्व अलग है न परिणाम अलग है। तो सत् परिणामात्मक वस्तुमें फिर सत् और परिणाम अलग अलग मान लेना यह युक्तिसङ्गत नहीं है। जैसे जल सुगन्धित है, है नहीं सुगन्धित? जलमें जो मिट्टी पड़ी है उसकी गंध है न्याय-

http://sahjanandvarnishastra.org/

दर्शनके अनुसार केवल जल ही जल हो और उसमें रजकण जरा भी न हों तो वहाँ गंध नहीं मानी गई। जो जल सड़ गया है, तो वहाँ जलके अतिरिक्त दूसरी चीज समाई हुई है उसके सड़नेसे उसकी गंध बनी है। तो यों जल सुगंधित है, यह कहना स्वरूपासिद्ध है, इसी प्रकार सत् और परिणाममें विशेषण विशेष्य भाव बताना युक्तिसङ्गत नहीं है।

अग्निर्वैश्वानर इव नामद्वैतं च नेष्टसिद्ध्यर्थम्।
साध्यविरुद्धत्वादिह संदृष्टेरथ च साध्य शून्यत्वात् ॥३६७॥

अग्नि वैश्वानरकी तरह सत् परिणामको नामद्वय माननेकी शंकाका समाधान – चौथी जिज्ञासामें जिज्ञासुने यह बात प्रकट की थी कि जैसे अग्निके अग्नि और वैश्वानर ये दो नाम रख दिये जाते हैं और इसको कोई अग्निके नामसे बोल दे तो उस पदार्थका बोध होगा, कभी वैश्वानरके नामसे बोल दिया उस पदार्थके नाम से बोध होगा, इसी प्रकार क्या सत् और परिणाम वे एक वस्तुके दो नाम हैं ? यों उस प्रश्नमें पूछा गया है ? यद्यपि अग्नि और वैश्वानरके प्रयोगमें कुछ घटना भेद अवश्य है। जब सभी काम करते हैं पूजन, जाप मंत्रादिक तब वहाँ अग्नि शब्दसे नहीं बोलते। कहते हैं वैश्वानर लावो, और जब रसोई बनाने बैठते हैं तो वहाँ कोई यह नहीं कहता कि वैश्वानर लावो। सभी लोग कहते हैं कि अग्नि लावो। यों अग्नि और वैश्वानरमें अन्तर है। जैसे हिन्दीमें अपभ्रंसमें वैसांदुर कहने लगते हैं। अग्निका दूसरा नाम है वैश्वानर। तो जिज्ञासुका यह कहना था कि वस्तु एक है, नाम उसके दो हैं। अग्नि और वैश्वानर। इसी तरहसे वस्तु एक ही है उसे दो धर्मोंसे समझाया है सत् और परिणाम कभी सत् कहकर उसी पदार्थका समझाना बनता है कभी परिणाम कहकर उसी वस्तुका समझाना बनता है। प्रयोजन भेद जैसे अग्नि और वैश्वानरके प्रयोगमें है इसी प्रकार प्रयोजन भेद सत् और परिणाममें रहा आया। उसका विरोध न करें मगर वस्तु एक ही कहा गया है, ऐसा उस जिज्ञासुका प्रश्न करना और उसके लिए अग्नि वैश्वानरका दृष्टान्त देना यह भी इष्टका साधन नहीं है। क्योंकि कथन साध्य विरुद्ध है और दृष्टान्तमें भी साध्य शून्यताका दोष है। कैसे साध्य विरुद्ध है दृष्टान्त और साध्य शून्य है उसी बातको अब प्रकट करते हैं।

नामद्वयं किमर्थादुपेक्ष्यधर्मद्वयं च किमपेक्ष्य।
पृथगे धर्माभावेऽप्यलं विचारेण धर्मिणोऽभावात् ॥३६८॥

सत् परिणामको मात्र नामद्वय माननेपर धर्मद्वयकी अनपेक्षा व अपेक्षा का विकल्प करके प्रथमपक्षमें दोषारोपण—अग्नि और वैश्वानरके दृष्टान्त द्वारा

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

जो दो नामकी कल्पना की गई है कि पदार्थ एक है, उसके दो नाम हैं सत् और परिणाम। सो यह बतलाओ कि दो नामकी जो यह कल्पना है सो दो धर्मोंकी अपेक्षा न रखकर नाम कल्पना की गई है याने सत्में शाश्वतपना नित्य वस्तुका स्वभावभूत स्वरूप वह एक धर्म है पदार्थ चूंकि ध्रुव है, सदा काल रहता है तो उसमें यह एक द्रव्यत्व कहकर नित्यत्व कहना धर्म है और परिणाम कहकर यह नजरमें लिया गया कि अवस्था क्षण-क्षणमें दूसरी दूसरी होती रहती है और वह अनित्य है। यों परिणामका धर्म अनित्य है। तो उस अनित्य धर्मको दृष्टिमें रखकर परिणाम नाम रखा गया। यों धर्मकी अपेक्षासे इस नामकी कल्पना है या धर्मकी अपेक्षा न रखकर मानो उसमें कुछ अर्थ ही न भरा हो, केवल नाम रख दिया गया हो क्या इस तरहकी बात है? जैसे कभी बच्चेका नाम धर्मकी अपेक्षा रखकर रखा गया, कभी धर्मकी अपेक्षा नहीं रखी गई। जैसे अनेक नाम हैं। उनमें धर्मकी कोई बात नहीं मालूम होती। और अनेक नाम धर्मकी अपेक्षासे हैं। तो यों सत् और परिणाम इन दो नामोंकी जो कल्पना की गई है वह कोई धर्मकी अपेक्षासे है या धर्मकी अपेक्षा बिना? यदि कहो कि धर्मकी अपेक्षा किये बिना ही सत और परिणाम ऐसे दो नाम रखे गए हैं तो जब धर्मकी अपेक्षा हो गई याने धर्म ही न रहा, धर्म दृष्टिमें ही न रखा तो धर्मका भी अभाव हो गया। जब कोई वस्तु ही न रहे तब किसी भी प्रकारका विचार करना व्यर्थ ही हो जाता है। वैसे तो मोटेरूपमें समझ सकते हैं हर एक कोई कि जब पर्याय कहा तो तुरन्त बुद्धिमें अवस्था दशा क्षणिक मिट जाने वाली यह सब बात समझमें आ जाती हैं। इस समझकी अपेक्षा ही न रखे और यों ही परिणाम नाम रख दिया तो लो कुछ धर्म ही न रहा, नाम किसका रखते हो? यों ही जब सत कहा तो बोध होता है कि यह सदा रहने वाला, शाश्वत स्वरूप वस्तु स्वभाव भाव भानमें रहता है, अब इस धर्मकी अपेक्षा ही न रखें तो वस्तु ही न रहे, फिर नाम ही किसका रखना। तो धर्मोंकी अपेक्षा करके तो कोई इष्ट सिद्धि नहीं होती। अब द्वितीय पक्षकी बात आगे कहेंगे।

पृथमेतरपक्षेऽपि च भिन्नमभिन्नं किमन्वयात्तदिति।
भिन्नं चेदविशेषादुक्तवदसतो हि किं विचारतया ॥ ३६६ ॥

सत् व परिणाम इन दो नामोंको धर्मद्वयकी अपेक्षासे माननेपर उनमें भेद अभेदके विकल्प करके भेदपक्षमें दोषारोपण सत् और परिणाम अग्नि और वैश्वानरके समान दो नाम शङ्काकारने बताये थे, उस सम्बन्धमें दोष देकर यह पूछा जा रहा है कि जो दो नामोंकी कल्पना की गई है सो दो धर्मोंकी अपेक्षा करके की है या अपेक्षा न करके की है। यदि धर्मोंकी अपेक्षा न करके नामांकन किया है तो इस सम्बन्धमें समाधान उक्त गाथामें दिया था। अब यहाँ द्वितीय पक्षके सम्बन्धमें

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

कहा जा रहा है कि यदि धर्मकी अपेक्षा रखकर सत् और परिणाम ऐसे दो नाम रखे गए हैं, तो जिन दो धर्मोंकी अपेक्षा रखकर दो नाम बनाये हैं अर्थात् सत्का धर्म कह कर सत् नाम दिया है, परिणामका धर्म निरखकर परिणाम नाम दिया है, तो वह धर्म द्रव्यसे भिन्न है कि अभिन्न है ? इस प्रकार ये दो प्रश्न उत्पन्न होते हैं जब इन धर्मोंकी दृष्टिसे नामकरणकी बात कही जा रही है। अब इन दो पक्षोंमें अर्थात् धर्म द्रव्यसे भिन्न है और क्या धर्म द्रव्यसे अभिन्न है ? ऐसे दो पक्षोंमें इसका विचार किया जायगा। इनमेंसे यदि यह कहा जाता है कि दोनों धर्म द्रव्यसे भिन्न हैं, तो जब धर्म भिन्न हो गए तो कोई विशेषता न रही। धर्मी अलग है, धर्म अलग है। तो जैसे पहले धर्मोंका अभाव कहा आया है उसी प्रकार यहाँ भी धर्मोंका अभाव प्राप्त होता है। इस कारण भिन्न पक्षके विचार करनेमें कोई लाभ नहीं है। जब धर्म द्रव्यसे भिन्न हो गया तो वह धर्म रहित पदार्थ है, उसकी कोई सत्ता नहीं रहती, असत् हो सकता है।

अथ चेद्युतसिद्धत्वात्तन्निष्पत्तिर्द्वयोः पृथक्त्वेऽपि ।
सर्वस्य सर्वयोगात् सर्वः सर्वोऽपि दुर्निवारः स्यात् ॥ ३७० ॥

सत् परिणामको व धर्मद्वयको पृथक पृथक मान करके भी सम्बन्धकी बनावट करनेमें सर्वकी सर्वात्मकताका प्रसङ्ग - अब यदि दोनोंके भिन्न रहनेपर भी युतसिद्धसे धर्मधर्मी भावकी निष्पत्ति बन जायगी, ऐसा स्वीकार करते हो तो देखिये ! धर्म भिन्न रहे और फिर भी उस धर्मसे धर्मीकी निष्पत्ति मान ली कि यह धर्मी है, यह इसका धर्म है, तो पृथक होनेपर भी यदि धर्म धर्मीका सम्बन्ध मान लिया जाता है तो पृथक पृथक तो संसारके अनन्त द्रव्य हैं, फिर सभीका सबके सम्बन्धसे सभी बात बन बैठेगी। फिर तो कोई पदार्थ ही न रहेगा। इस कारण यह कथन बिल्कुल असङ्गत है कि धर्म धर्मी अत्यन्त पृथक हैं फिर भी उनमें सम्बन्ध मान लिया जाता है। पृथक पदार्थोंमें सम्बन्ध माननेका कोई सम्बन्ध तो होना चाहिए। किस कारणसे सम्बन्ध माना जा रहा है ? तो कारण ही कुछ ऐसा नहीं हो सकता कि पृथक पदार्थोंमें धर्म धर्मी सम्बन्ध मान लिया जाय। भले ही पृथक पदार्थोंका संयोग सम्बन्ध हो जाय पर संयोगका अर्थ तो इतना ही है कि एक पदार्थके निकट भिड़कर अनन्तर दूसरा पदार्थ आ गया पर धर्मधर्मी भाव तो नहीं मिटता। अगर पृथक होने पर भी धर्म धर्मीका सम्बन्ध मान लिया जाता है तो संसारके सारे पदार्थ हैं, सभीके धर्म बन बैठें। फिर कुछ पदार्थ अलगसे रहा ही नहीं, किसीकी स्वतन्त्र सत्ता ही न रही।

चेदन्वयादभिन्नं धर्मद्वैतं किलेति नयपक्षः ।
रूपपटादिपदिति किं किमथ क्षारद्रव्यवच्चेति ॥ ३७१ ॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

सत् परिणामको व धर्मद्वयको अभिन्न माननेपर अभिन्नताके प्रकारमें दो विकल्पोंका उत्थापन—यदि दूसरा पक्ष यह स्वीकार करते हो कि धर्म अन्वयसे अभिन्न है, जिसमें कि धर्म बताते हैं उस अर्थसे धर्म अभिन्न है, एक है। तो इस अभिन्नताके सम्बन्धमें यह बतलाइये कि यह अभिन्नतारूप और पटके समान है या क्षार और द्रवके समान है ? जैसे कि कपड़ा और रूप ये दोनों अभिन्न हैं. पटसे अलग रूप नहीं किए जा सकते, रूपसे अलग पट कहाँ है वहाँ ? तो जैसे पट और रूप अभिन्न हैं रूपको छोड़कर पट कोई चीज नहीं है वहाँपर और पटके अतिरिक्त रूप वहाँ कहीं नहीं रखा है। तो जैसे रूप और पट परस्पर अभिन्न हैं क्या इस प्रकारसे सत् और परिणाम जिन धर्मोंकी दृष्टिसे नाम बताया गया है उन धर्मोंसे क्या इस प्रकार अभिन्न है ? या क्षार और द्रवके समान अभिन्न हैं ? जैसे कोई नमक खारा भी है, द्रव भी है तो जैसे द्रव और क्षारमें अभिन्नता है क्या इस प्रकारकी अभिन्नता मानते हो ? या यों दो प्रश्न उत्पन्न होते हैं ? यदि धर्मको अन्वयसे अभिन्न माना जाय और ऐसा अभिन्न मानकर फिर सत् और परिणामका नामाङ्कन धर्मकी अपेक्षा करके किया जाय तो बताओ इन दोनोंमेंसे किस प्रकारकी अभिन्नता है ?

क्षारद्रव्यवदिदं चेदनुपादेयं मिथोऽनपेक्षत्वात् ।
वर्णततेरविशेषन्यायान्न नयाः प्रमाणं वा ॥ ३७२ ॥

सत् परिणामको व धर्मद्वयको क्षार द्रवके समान अभेद माननेपर परस्पर अनपेक्ष होनेसे नय व प्रमाणके भी अभावका प्रसङ्ग – यदि धर्म धर्मीकी अभिन्नता जो सत् और परिणामके प्रसङ्गमें कही जा रही है, क्षार द्रवके समान माना जाता है। ऐसी अभिन्नता इस प्रकृतमें उपादेय नहीं बन सकती, क्योंकि विरुद्धता नजर आयी। क्षार और द्रव ये परस्परमें निरपेक्ष हैं, क्षारका काम रससे सम्बन्धित है खारा हो गया वह रस गुणकी बात है और द्रवकी बात द्रव्यसे कोई द्रवीला पदार्थ और वह बह रहा है तो वह द्रव जो है वह पदार्थमें रहता है. वह प्रदेश परमाणुओंसे सम्बन्ध रखता है। क्षारता और द्रवता ये परस्पर विरुद्ध स्वरूप वाले भी हैं। तो जैसे वर्ण और पंक्ति वर्ण अनेक वर्ण क ख आदिक ये परस्परमें निरपेक्ष हैं कहीं क की वजहसे ख नहीं बन गया, उनका उच्चारण अलग अलग है, और उन रूपोंके वर्णोंकी समझ अलग है। तो जैसे क ख आदिक वर्ण निरपेक्ष हैं, स्वतंत्र हैं, इसीप्रकार क्षार और द्रव भी परस्पर निरपेक्ष हैं। तो क्षार द्रवकी भाँति सत् परिणामके धर्मोंमें अभिन्नता मानी जाती है और वह अभिन्नता क्षार द्रवके समान है तो वह अभिन्नता क्या रही ? क्षार द्रव्य निरपेक्ष ही रहे, तब यह दृष्टान्त देना और वर्णोंका दृष्टान्त देना ये दोनों एक समान दृष्टान्त हुए और फिर जो क ख आदिक वर्णोंके दृष्टान्तके सम्बन्धमें दोष दे आये हैं वे सब दोष यहाँ प्राप्त होंगे। निष्कर्ष यह है कि फिर नय और प्रमाण ये कुछ

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

न ठहर सकेंगे।

रूपपटादिवदिति चेत्सत्यं प्रकृतस्य सानुकूलत्वात्।
एकं नामद्वयाङ्कमिति पक्षस्य स्वयं विपक्षत्वात् ॥ ३७३ ॥

सत् परिणामको व धर्मद्वयको रूप व पटके समान अभेद माननेपर अनुकूलताका निर्णयन – यदि सत् और परिणामके वस्तुसे धर्मोंकी अभिन्नता रूप और पटके समान मानी जाती है तो यह बात प्रकृतिके अनुकूल है। ठीक है ऐसा मानना कि सत् और परिणामकी वस्तुसे अभिन्नता है और ऐसी अभिन्नता है जैसे कि रूप और पट। तो ठीक ही है पदार्थ है और वह पदार्थ ही समग्र द्रव्य दृष्टिसे शाश्वत् नित्य है और पर्याय दृष्टिसे वह पदार्थ क्षणिक विनाशीक है। ठीक है, एकमें नित्यत्व धर्म दीखा, एकमें अनित्यत्व धर्म दीखा और इन दोनों धर्मोंकी दृष्टि रखकर यदि सत् और परिणाम ऐसे दो नाम बता दिए हैं तो पूर्ण वस्तुके वे दो नाम नहीं हुए, किंतु द्वयात्मक वह वस्तु हुई। यों स्वयं शङ्काकारके प्रस्तुत किए गए आशयसे विरोध हो जानेसे शङ्काकारके आशयका खण्डन हो जाता है। सत् और परिणामको केवल एक किसी भी नामसे कह देनेकी बातके समर्थनमें जिज्ञासुने अग्नि और वैश्वानरका दृष्टांत दिया था। उसके सम्बन्धमें मूलमें यह पूछा गया कि नाम यों ही रख दिया या धर्मों की दृष्टिसे। यदि कहा जाय कि यों ही रख दिया, धर्मकी दृष्टि नहीं है, तो जब धर्म ही विदित नहीं हुआ तो धर्मी क्या रहा ? और धर्मकी दृष्टिसे रखे गए तो वह धर्म वस्तुसे भिन्न है या अभिन्न ? भिन्न माननेपर भी कुछ व्यवस्था नहीं बनती। अलग अलग ही है। किसका कौन धर्म कहलायेगा ? और अगर धर्मोको भिन्न मान लिया जाता तो मूल प्रश्न यह किया गया कि वह अभिन्नता संयोगरूप है या तादात्म्यरूप ? संयोगरूप अभिन्नता तो धर्मधर्मीके किसीने स्वीकार नहीं की और यों संयोगसे धर्म धर्मी कहलाने लगे तो यों तो सारा विश्व है, सब सर्वात्मक बन जायगा। और, यदि तादात्म्य रूपसे अभिन्न मान लिया जाता है तो कोई हानि नहीं है। यहाँ वस्तु है और उसका शाश्वत अस्तित्व है और वह निरन्तर परिणमता रहता है। तो परिणमनशीलता और शाश्वत अस्तित्व ये दोनों धर्म एक वस्तुमें निर्बाध रहते हैं। तब शङ्काकारका यह पक्ष कि सत् और परिणाम एक ही वस्तुके दो नाम हैं, वे नहीं रहते हैं। किंतु सत् परिणामात्मक वस्तु है, वस्तुका नाम कुछ और ही है। भले ही उसे किसी धर्मकी मुख्यतासे सत् कह दिया जाय किसी धर्मकी मुख्यतामें परिणामी कह देनेपर सत् और परिणाम दोनों स्वतन्त्र नहीं हैं और न ये दोनों निरपेक्षतया पर्यायवाची नाम कर सकते हैं।

अपि चाकिञ्चित्कर इव सव्येतर गोविषाण दृष्टान्तः ।
सुरभि गगनारविन्दमिवाश्रयासिद्धदृष्टान्तात् ॥३७४॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

बायें दायें सींगकी तरह सत् और परिणामको माननेपर आश्रयासिद्धता का दोष—५ वें जिज्ञासुका यह प्रश्न था कि क्या दायें बायें सींगकी तरह सत् और परिणाम स्वतंत्र चीज है। उस सम्बन्धमें यह उत्तर दिया जा रहा है कि यह दृष्टान्त सत् परिणामात्मक वस्तुको समझनेमें अकिञ्चितकर है क्योंकि दृष्टान्तमें जो बात कही गई है वहाँ आश्रय कुछ समझा जाता है। सींग हैं किसी बछड़ेके दायें और बायें, उनका आधार तो है बछड़ेका मस्तक, जिसमें दायें बायें सींग निस्पन्न हैं। तब सत् और परिणामका भी आश्रय मानना चाहिए कुछ, पर सत् और परिणामका आधार है सत् परिणामात्मक वस्तु कोई दो पदार्थ हों सत् और परिणाम, और उसके आधारभूत अलग कोई पदार्थ हो तब तो उसमें आश्रय आश्रयिता बतायी जाय। समझनेके लिए आश्रय आश्रयी बताना यह एक नयकी बात है पर ऐसे कोई तीन पदार्थ हों और उनमें एक पदार्थ कोई अलग हो, एक पदार्थ सत् हो और एक पदार्थ परिणाम हो जैसे यहाँ तीन बातें हैं दृष्टान्तमें दाँया सींग अलग है बाँया अलग है और इसके आधारभूत मस्तक अलग है तो सत् और परिणामका आधार ही जब नहीं मान रहे तो आश्रयासिद्ध है अथवा दृष्टान्त भी आश्रयासिद्ध है क्योंकि दृष्टान्तमें भी कोई आधार स्पष्ट नहीं किया गया और प्रकृतमें तो कोई पृथक आधार है ही नहीं वस्तु और वह सत् परिणामात्मक है।

न यतः पृथगिति किञ्चित् सत्परिणामातिरिक्तमिह वस्तु ।
दीपप्रकाशयोरिह गुम्फितमिव तद्द्वयोरैक्यात् ॥ ३७५ ॥

सत् और परिणाम दीप व प्रकाशकी तरह गुम्फित होनेसे सत् और परिणामके अवबोधके लिये दायें बायें सींगका दृष्टान्त देनेकी असंगतता—दायें और बायें सींगके दृष्टान्तको आश्रय सिद्ध यों कहा गया है कि सत् और परिणाम के अतिरिक्त स्वतंत्र अन्य कोई वस्तु नहीं है जिसके आश्रयमें सत् और परिणाम रहे। जैसे कि दायें और बायें सींगका आधार पशुका मस्तक है इसी प्रकार सत् और परिणामका आधार कोई इन दोनोंसे प्रतिकूल आधार हो ऐसा तो नहीं है, इस कारण आश्रयासिद्ध दोष है और आश्रयासिद्ध दोष होनेसे जैसे कोई कहे कि आकाश कमल सुगन्धित है तो सुगन्धितकी बात दिखाती कहाँ है ? उसका आधार तो कुछ है नहीं। आकाश कमल तो अदृष्ट हुआ करता है। जैसे आकाश कमल सुगन्धित हैं ऐसे कथनमें आश्रयासिद्ध दोष है। इसी प्रकार सत् और परिणाम दायें बायें सींगके समान है, ऐसा कहनेमें प्रकृतिमें भी आश्रयासिद्ध दोष होते हैं, तो सत्ता और परिणाम बायें और दायें सींगके समान नहीं है किन्तु जैसे दीपक और प्रकाशमें अभेद होनेसे ये दीप और प्रकाश गुम्फित हैं उसी प्रकार सत् और परिणाममें ऐक्य होनेसे एकता है, इस कारण वह परस्परमें तदात्मकपनेका परिणाम है और दीप प्रकाशकी तरह अभेदरूप

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

से गुम्फित है ।

आमानामविशिष्टं पृथिवीत्वं नेह भवति दृष्टान्तः ।
क्रमवर्तित्वादुभयोः स्वेतरपक्षद्वयस्य घातित्वात् ॥३७६॥

कच्चा और पक्का घड़ेका क्रमवर्तित्व होनेसे सत् और परिणामके सम्बन्धमें आमानामविशिष्ट घटके दृष्टान्तकी अयुक्तता—अब छठवें जिज्ञासुने सत् और परिणामके विषयमें यह जिज्ञासा प्रकटकी थी कि सत् और परिणाम कच्ची और पक्की मिट्टीकी तरह होगा । समाधानमें यह जानना चाहिए कि कच्ची और पक्की मिट्टी क्रमसे हुआ करती है । अब घडा बना तो पहिले कच्ची मिट्टीसे कच्चा ढाचा बनाया गया फिर ढाचा रखकर उसे पकाया गया तो कच्चा घड़ा पहिले था, बादमें पक्का बनता है, तो कच्चे और पक्के घड़ेमें क्रमवर्तीपना है और जब क्रमवर्तित्व आयगा दृष्टिमें तो यह दृष्टान्त फिर दोनों ही पक्षका घात करने वाला है । दिया गया था दृष्टान्त इसलिए कि कच्ची और पक्की मिट्टीके समान सत् और परिणाम भी स्वतंत्र सिद्ध हो जायगा किन्तु उल्टा और दोष आया शङ्काकारके कथनमें कि कच्ची और पक्की मिट्टी क्रमसे होती है । इस कारण यह दृष्टान्त दोनों पक्षोंका घातक है । अब इस दृष्टान्तमें दोनों पक्षोंका विघात किस तरह होता है इस बातको क्रमशः बता रहे हैं ।

परपक्षवधस्तावत् क्रमवर्तित्वाच्च स्वतः प्रतिज्ञायाः ।
असमर्थसाधनत्वात् स्वयमपि वा बाधकः स्वपक्षस्य ॥३७७॥

सत् और परिणामको कच्चे पक्के घटकी तरह मान लेनेसे स्वपक्ष व परपक्ष दोनोंका घात—शङ्काकारने दृष्टान्त द्वारा जो प्रतिज्ञा की है वह स्वभावसे क्रमवर्तीपनेकी समर्थक हो गयी । यद्यपि शङ्काकारका दृष्टान्त देते समय आशय तो यह था कि जैसे कच्चा घड़ा स्वतंत्र अपने आपमें है, पक्का घड़ा स्वतंत्र अपने आपमें है लेकिन कच्ची और पक्की तो अवस्थायें हैं ये पृथक प्रथक द्रव्य तो नहीं हैं तो इस अवस्थामें क्रम पाया जाता है तो क्रमवर्तीपना इस प्रतिज्ञासे सिद्ध हुआ सो परपक्षका घात हो गया । यहाँ पर पक्षसे मतलब है सिद्धान्तकारका आश्रय । इस समय चूंकि सिद्धान्तकार शङ्काकारको समझा रहा है और उसके ही कथनसे उसके लिए पर पक्ष के निघातकी बात कह रहे हैं तो परपक्ष मायने सिद्धान्तका पक्ष । सिद्धान्त यह नहीं मानता कि सत् और परिणाममें क्रमवर्तीपना है लेकिन सिद्ध यह हो बैठता है दृष्टान्त द्वारा कि सत् और परिणाम भी क्रमवर्ती है, जैसे मानो सत् पहिले था और फिर परिणाम बना है । तो यों स्वपक्षका अर्थात् सिद्धान्तपक्षका घात होता है । और

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

शङ्काकारका जो निजपक्ष है कि वह स्वतंत्र सिद्ध करना चाहता था सत् और परिणाम को सो दृष्टान्त खुद भी दे दिया कि जिससे स्वातंतय सिद्ध न हो सके। कच्ची और पक्की अवस्था ये स्वतंत्र चीज तो नहीं हैं, इनके आश्रयभूत एक घड़ा है. जो घड़ा पहिले कच्ची अवस्थामें था अब पक्की अवस्थामें आया तो यह अवस्था स्वतंत्र नहीं है ऐसे ही सत् और परिणाम भी स्वतंत्र न ठहरेंगे। तो स्वातंतय सिद्ध करनेका शंकाकारका पक्ष था, सो अब शंकाकारका पक्ष भी नष्ट हो गया है। तब शंकाकारका स्वयं कथन उभयपक्षके विघातके लिए बन गया।

तत्साध्यमनित्यं वा यदि वा नित्यं निसर्गतो वस्तु।
स्यादिह पृथिवीत्वतया नित्यमनित्यं ह्यपक्वपक्वतया ॥ ३७८ ॥

एकान्तवादमें सत् और परिणामका स्वरूप बतानेके लिए दृष्टान्तकी असङ्गतता तीसरी बात यह है कि शङ्काकार जो कुछ भी बतायगा ना कि साध्य करेगा वह या तो अनित्य होगा या नित्य होगा। स्याद्वाद शासनका अनुसरण तो शङ्काकार करता नहीं है तब कुछ भी वस्तु बतायेंगे वह वस्तु या तो अनित्य होगा अथवा नित्य होगा। सो सर्वथा नित्य और अनित्य माननेपर अनेक दोष आते हैं। यदि सर्वथा अपरिणामी है तब उसमें बाहरी अर्थक्रिया ही नहीं हो सकती तब उसका व्यवहार क्या? उस पदार्थसे लाभ क्या? उसकी सत्ता भी न रहेगी। यदि पदार्थको सर्वथा अनित्य माना जा रहा है तो पदार्थ पहिले और पीछे तो होता ही नहीं। एक ही समयमें हुआ और नष्ट होगया। तो उस पदार्थसे भी अर्थक्रिया व्यवहार बंध मोक्ष ये सब कुछ नहीं ठहर सकते हैं। तो सर्वथा नित्य और सर्वथा अनित्य माननेसे अनेक दोष आते हैं, इस कारण सिद्ध यह हो बैठता है शङ्काकारके ही दृष्टांतमें कि जैसे कच्चा और पक्का घड़ा, यह तो धर्म हैं अवस्था है, इस कारण अनित्य है और पृथ्वी सामान्य चूंकि घड़ेकी स्थितिमें भी है और पक्व घड़ेकी स्थितिमें भी है इस कारण नित्य है। तो यों सुगमतया ही पदार्थ नित्यानित्यात्मक सिद्ध हो गया। इसी तरह सभी पदार्थोंको जानना चाहिए और सत् और परिणामके सम्बन्धमें यह निष्कर्ष निकालना चाहिये कि सत् जिस दृष्टिसे देखा जा रहा है उस दृष्टिसे नित्य सिद्ध होता है और परिणाम जिस दृष्टि से देखा जा रहा है परिणाम अनित्य है तो पदार्थ वहाँ अनित्य सिद्ध होता है। और सत् और परिणाम कोई पृथक-पृथक पदार्थ हैं न कि चलो कोई सत नामका पदार्थ नित्य हो गया और कोई परिणाम नामका पदार्थ अनित्यहो गया। यों निरपेक्ष भी नित्यानित्य नहीं है किन्तु सत् परिणामात्मक ही वस्तु है और वह नित्यानित्यात्मक है। यों शंकाकारका यह छठवाँ दृष्टान्त भी युक्तिसंगत नहीं है बल्कि स्वयं ही सिद्धान्तका समर्थन करने वाला है।

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

अपि च सपत्नीयुग्मं स्यादिति हास्यास्पदोपमा दृष्टिः ।
इह यदसिद्धविरुद्धानैकान्तिकदोषदुष्टत्वात् ॥३७९॥

सत् और परिणामका अवगम करनेके लिए सपत्नीयुग्मके दृष्टान्तकी अनुचितता – ७ वें जिज्ञासुने सत और परिणामके विषयमें सपत्नीयुग्मका दृष्टान्त दिया था कि जैसे दो सपत्नियाँ क्रमसे आयी हुई हैं, क्रमसे उत्पन्न हुई हैं, पर वर्तमान में एक साथ हैं और दोनों परस्पर विरुद्ध हैं और फिर भी एक जगह रहती हैं, इसी प्रकार सत परिणाम भी क्या क्रमसे उत्पन्न हुआ है और वर्तमानमें एक जगह रह रही हैं और एक दूसरेसे विरुद्ध होकर रह रही हैं, इस प्रकारकी जिज्ञासा प्रकट की थी पर यह दृष्टान्त यह कथन उस स्याद्वादके समान है क्योंकि प्रकृतमें इस दृष्टान्तके मानने पर अशुद्ध, विरुद्ध और अनेकान्तात्मक ये तीन दोष उपस्थित होते हैं। ये तीन दोष किस प्रकार इस दृष्टान्तमें आते हैं उनका वर्णन आगे कर रहे हैं।

माता मे बन्ध्या स्यादित्यादिवदपि विरुद्धवाक्यत्वात् ।
कृतकत्वादिति हेतोः क्षणिकैकान्तवत्कृतं विचारतया ॥३८०॥

सपत्नीयुग्म दृष्टान्तकी विरुद्धता व अनैकान्तिकता—सत और परिणामके विषयमें जो दृष्टान्त दिया था उस दृष्टान्तमें असिद्ध, विरुद्ध और अनेकान्तिक ये तीन दोष आते हैं। वे किस प्रकार दोष आते हैं सो सुनो! जैसे कोई कहे कि मेरी माता बन्ध्या थी तो उसका कथन विरुद्ध है कि नहीं ? है। तो जैसे उसमें विरुद्धता आती है इसी प्रकार सत् और परिणामको सपत्नी युगलके समान सिद्ध करना भी विरुद्ध बैठता है एकान्तमें ये दोष आ रहे हैं, जब सत् ही है अर्थात् शाश्वत् नित्य ही है तो परिणामका कथन कैसे युक्त होगा ? जब परिणाम ही है तो शाश्वतपनेकी दृष्टि कैसे सिद्ध होती है? स्वरूप चूंकि दोनों परस्पर विरुद्ध हैं इस कारण सर्वथा एकांतवादमें विरुद्धताका दोष आता है। और, जैसे कृतकत्व हेतुमें अनेकान्तिक दोष है, जैसे कोई प्रयोग करे कि घट और पट सर्वथा भिन्न हैं कार्य होनेसे सपत्नीयुग्मके समान। तो यहाँ कृतकत्व हेतुसे घट और पटकी भिन्नता सिद्ध करनेके लिए दिया है लेकिन यही कृतकत्व हेतु तंतु और पटमें अभिन्नपनेका भी समर्थन कर देती है। तो कर्तृत्व हेतुने साध्यके विरुद्ध बात सिद्ध कर दी, इस कारण अनेकान्त दोष आता है। यों ही सत् और परिणामको सपत्नीयुग्मके समान सिद्ध करनेमें भी अनेकान्तिक दोष आता है। सिद्ध तो यह करना चाह रहे थे कि कि सत् और परिणाम परस्पर विरुद्ध स्वरूप वाले हैं किन्तु सिद्ध यह हो जाता है कि सत् और परिणाम अविरुद्ध रूपसे एक पदार्थ में रह रहे हैं. यह भी सिद्ध हो सकता, और एक सामान्य हेतु द्वारा जो साध्य बनाया वह भी सिद्ध हो सके इस कारण यह अनेकान्तिक दोषसे दूषित है।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

सत् और परिणामकी तुलनामें सपत्नी युग्म दृष्टान्तकी असिद्धता। — सपत्नीयुग्मके दृष्टान्तमें असिद्ध नामका दोष इस प्रकार आता है कि जैसे प्रयोग किया जाय कि समस्त पदार्थ अनित्य है सर्वथा क्षणिक होनेसे सपत्नीयुग्मके समान। तो इस अनुमानमें जैसे असिद्ध दोष आता है उसी प्रकार सत् और परिणमको सपत्नीयुग्मके समान सिद्ध करनेमें असिद्ध नामका दोष आता है। स्थूलरूपमें समाधानका यह अभिप्राय है कि सत् और परिणाम दो सौत एक घरमें रहें, इस भाँति नहीं रहतीं, क्योंकि दृष्टान्त जो दिया गया है उनकी अनेक बातें भिन्न-भिन्न स्वतंत्र सिद्ध होती हैं। घर दोनों स्त्री पति आदिक बहुतसे पदार्थ भिन्न-भिन्न सिद्ध हैं और वहांका यह कथन है किंतु प्रकृतिमें कोई दो पदार्थ ही नहीं हैं अर्थात् सत परिणाम और इनका घर ऐसी कोई तीन चीजें नहीं हैं। कोई दो भी नहीं हैं किंतु पदार्थ वह एक है और वह एक पदार्थ सतपरिणामात्मक है अर्थात् शाश्वत है और क्षण क्षणमें परिणमन करने वाली है। तो ऐसे सत्परिणामात्मक पदार्थ कि सत और परिणाम इन दोनों धर्मोंको सपत्नीयुग्मकी तरह विरुद्ध रहकर एक जगह निवास करनेकी बात सिद्ध करना यह एक हास्यकी तरह बात है। सभी लोग स्पष्ट अनुभव करते हैं कि प्रत्येक पदार्थ है। वह प्रतिसमय नवीन अवस्थारूपमें प्रकट होता है और पुरानी अवस्थाको विलीन करता है और सब अवस्थाओंमें ही बना रहता है। ऐसे उत्पादव्ययध्रौव्यात्मक सत्परिणामात्मक प्रत्येक पदार्थमें सिद्ध है, वहाँ विरुद्धरूपसे रहे, स्वतंत्र हो यह कोई बात सिद्ध नहीं।

तद्वाज्ज्येष्ठकनिष्ठभ्रातृद्वैतं विरुद्धदृष्टान्तः।
धर्मिणि चासति तत्वे तथाश्रयासिद्धदोषत्वात् ॥ ३८१ ॥

सत् और परिणामके परिचयमें बड़े छोटे भाईका दृष्टांत देनेपर विरुद्धता व आश्रयासिद्धताका दोष — ८ वीं जिज्ञासामें पूछा गया था कि जैसे जेष्ठ और कनिष्ठ ये दो भाई परस्पर मेलसे रहते हैं क्या इस प्रकार सत् और परिणाम ये परस्पर भिन्नतासे रहते हैं? क्या इसकी ऐसी तुलना है? उसके समाधानमें कहा जा रहा है कि जैसे पिछले दृष्टान्त अनेक दोषसे दूषित बता दिए गए, उसी प्रकार सत् और परिणामके सम्बन्धमें बड़े और छोटे भाईका दृष्टान्त भी दूषित है। प्रथम तो बात यह है कि दृष्टान्त रूपसे छोटे बड़े भाईको प्रस्तुत करना विरुद्ध है। विरुद्ध यों है कि छोटा भाई और बड़ा भाई ये दो क्रमसे होते हैं, पहिले बड़ा होता फिर छोटा, किन्तु सत् और परिणामके सम्बन्धमें यह बात नहीं है। दोनों एक साथ ही हैं ऐसा शङ्काकारको भी इष्ट है और सिद्धान्त भी ऐसा ही है कि सत् और परिणाम दोनों एक साथ ही हैं लेकिन बड़े और छोटे भाईका दृष्टान्त देनेसे सत् और परिणाममें भी क्रमवर्तिपना सिद्ध हो जाता है इस कारण छोटे बड़े भाईका दृष्टान्त विरुद्ध है। दूसरा दोष यह है कि सत् और परिणामको यदि बड़ा छोटा भाईके समान

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

माना जाता है तो छोटा भाई भी स्वतंत्र है, परिपूर्ण है, अपने आपका अस्तित्व स्वतंत्र रखता है। बड़ा भाई भी परिपूर्ण है, स्वतंत्र है, समान हकदार भी है, पूर्ण स्वतंत्रता है तो अब उन छोटे बड़े भाईयोंका कोई आश्रय है। माता पिताके आश्रयसे उत्पन्न होता है लेकिन सत् और परिणामका तो कोई तीसरा आश्रय नहीं है। वह तो एक ही वस्तु है और सत् परिणामात्मक है। किसी एक वस्तुसे सत् और परिणाम उत्पन्न हुए हों जैसे कि एक पितासे बड़ा और छोटा दो भाई उत्पन्न हुए हैं, इस तरह सत् और परिणामका कोई भिन्न आश्रय नहीं प्रतीत होता इस कारण यह दृष्टान्त आश्रयासिद्ध भी है।

अपि कोऽपि परायत: सोऽपि पर: सर्वथा परायत्तात् ।
सोऽपि परायत: स्यादित्यनवस्थाप्रसङ्गदोषश्च ॥ ३८२ ॥

सत् और परिणामके परिचयमें दिये गये बड़े छोटे भाईके दृष्टान्तसे अनवस्था दोषका प्रसङ्ग—सत् और परिणामके विषयमें बड़ा छोटा बड़े भाईका दृष्टान्त देने वालेके अभिमतमें अनवस्था दोष भी आता है जैसे बड़े और छोटे भाईकी उत्पत्ति उनके माता पिताके आधीन है। तो माता पिताकी भी उत्पत्ति उनके माता पिताके आधीन है। अब दिया जा रहा है छोटे बड़े भाईका दृष्टान्त, सत् परिणामके विषयमें तो यहाँ भी यह सिद्ध करना पडेगा कि सत् और परिणामको उत्पन्न करने वाला कोई पदार्थ है। प्रथम तो कोई पदार्थ है नहीं। कदाचित मान लिए जाएं तो वहाँ भी यह प्रश्न है कि उस उत्पादक कारणको भी उत्पन्न करने वाला कोई पदार्थ होना चाहिए इस तरह अनवस्था दोष आ जायगा उत्पादक कारणकी कहीं भी समाप्ति न हो पायगी। इस तरह सत् और परिणाम तो छोटे बड़े भाईके दृष्टान्त के समान यहाँ भी उत्पादक कारणोंको ढूढा जाता रहेगा तो कभी उत्तर समाप्त नहीं हो सकता इस कारण अनवस्था, दोष भी आता है, अत: सत् और परिणाम का मर्म समझनेके लिए छोटे बड़े भाईका दृष्टान्त विरुद्ध और अनवस्थित एवं आश्रयासिद्ध है।

सुन्दोपसुन्दमल्लद्वैतं दृष्टान्तत: प्रतिज्ञातम् ।
तदसदसत्त्वापत्तेरितरेतरनियतदोषत्वात् ॥ ३८३ ॥

सत् व परिणामके परिचयमें सुन्द उपसुन्द मल्लका दृष्टान्त देनेकी अयुक्तता—अब ९ वीं जिज्ञासामें शङ्काकारने पूछा है कि सत् और परिणाम क्या सुन्द और उपसुन्द मल्लोंकी तरह परस्पर प्रतिपक्ष है और एक दूसरेके आश्रयसे जीवित है। शङ्काकारके इस प्रस्तावमें अनेक दोष हैं। प्रथम तो इतरेतराश्रय दोष आनेसे सत्

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

और परिणाम दोनोंका ही अभाव प्राप्त होता है। जैसे कि सुन्द और उपसुन्दको बताया गया कि सुन्द उपसुन्दके बलपर अस्तित्त्व रख रहे थे और सुन्द उपसुन्दके बल पर सत्त्व रख रहे थे याने पुद्गलमें कोई एक क्या क्रिया करेगा ? किसीकी क्रिया दूसरे पर आश्रित है। तो यों युद्धके प्रसंगमें सुन्द उपसुन्दकी क्रियाके आश्रित हैं और उपसुन्द सुन्दकी क्रियाके आश्रित है। ऐसे ही सत् और परिणाम जो मान लिए जावेंगे तो सत् परिणामके आश्रित हो गया परिणाम सत्के आश्रत हो गया, फिर अस्तित्व किसका रहा ? सत् और परिणाम दोनोंका अस्तित्त्व समाप्त हो जाता है।

सत्युपसुन्दे सुन्दो भवति च सुन्दे किलोपसुन्दोऽपि ।
एकस्यापि न सिद्धिः क्रियाफलं वा तदात्मसुखदोषात् ॥३८४॥

सत् और परिणामके परिचयमें प्रस्तुत सुन्द उपसुन्द मल्लके दृष्टान्त से अनेक दोषापत्तियाँ उक्त कथनके विवरणमें कहा जा रहा है कि देखो उपसुन्द के होनेपर सुन्द होता है, और सुन्दके होनेपर उपसुन्द होता है, तो इस इतरेतराश्रय में एककी भी सिद्धि नहीं हो सकती और न फिर कोई कार्य बन सकेगा न उसका कोई फल हो सकेगा। सुन्द और उपसुन्द मल्लोंकी कथा एक पुराणमें इस प्रकार बतायी गई है कि शङ्कर जीके समयमें सुन्द और उपसुन्द जो बलिष्ट पुरुष थे। उन्होंने बड़ी भक्ति की और उस भक्ति तपश्चरणसे शिव प्रसन्न हुए, जब सुन्द उपसुन्द मल्लोंसे पूछा गया कि क्या चाहते हो? तो उन मल्लोंने एकदम पार्वती की मांग करली और पार्वती दे दी गई। अब पार्वतीके प्रति उन दोनोंमें विवाद खड़ा हुआ। सुन्द और उपसुन्द दोनों हर तरहसे अपना अपना अधिकार बतायें, तो उस समय ब्राह्मण का भेष धरकर शङ्कर स्वयं आये और उन दो मल्लोंसे लड़ाईकी बात पूछी और तब मध्यस्थता उन्होंने स्वीकार करली कि तुम लोगोंका हम निर्णय कर देंगे। कुछ बयान लेते गए, और यह निर्णय दिया कि तुम दोनों क्षत्रिय हो इस लिए इसका निर्णय तुम दोनों स्वयं कर सकते हो युद्ध द्वारा। उन दोनोंमें युद्ध प्रारम्भ करा दिया अब तो युद्ध द्वारा जो उनकी हालत हुई सो बताया गया कि दोनों ही प्राणरहित हो गए। तो कथानकसे दृष्टान्त यहाँ यह बताया जा रहा है कि जैसे सुन्द और उपसुन्द परस्पर विमुख थे और उनकी क्रियामें विमुखताके कारण एक दूसरेपर निर्भर था और अन्तमें सुन्द और उपसुन्द दोनों ही मृत हो गए तो ऐसा दृष्टान्त देना सत् और परिणामके बारेमें क्या क्या कल्पनायें बनेंगी। प्रथम तो सत् और परिणाम परस्पर विमुख हैं, यह सिद्ध करना चाहा, पर विमुख कैसे ? भले ही सत्का स्वरूप द्रव्यरूप है और परिणामका स्वरूप पर्यायरूप है पर द्रव्यसे विमुख पर्याय नहीं है। पर्यायसे विमुख द्रव्य नहीं है एक ही वस्तुमें ये दो धर्म हैं और वही पदार्थ सत् परिणामात्मक है। दूसरी बात यह सिद्ध करना चाही कि जैसे सुन्द उपसुन्द एक दूसरेपर निर्भर हैं

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

इसी प्रकार सत् और परिणाम भी एक दूसरेपर सत् और परिणाम भी एक दूसरेपर निर्भर होगा। सत्के कारण परिणाम है। परिणामके कारण सत् है सो वस्तु तो एक ही है। दो हो तो इतरेतराश्रयकी आधीनता बतायी जाय। और यदि युक्तिसे समझना चाहें तो ये कोई दोष नहीं हैं। यदि वस्तु परिणामी नहीं तो इसका अस्तित्व शाश्वत् रह ही नहीं सकता। यदि कोई शाश्वत् वस्तु न हो तो उसमें परिणाम हो ही नहीं सकता। यह इतरेतराश्रय क्या है? यह तो पदार्थका स्वरूप है कि पदार्थ सत् परिणामात्मक होता है। तीसरी बात यह जाहिर की, जो चाहे शङ्काकारको इष्ट हो या न हो पर दृष्टान्तमें जाहिर होता है कि जैसे सुन्द और उपसुन्द दोनों परस्पर युद्ध करके मृत हो गए इसी प्रकार सत् और परिणाम दोनों ही परस्पर विमुख होकर लड़ भिड़कर ये भी मृत हो जायेंगे। लो यों तो पदार्थका ही अभाव हो जायगा। तो सुन्द और उपसुन्दका दृष्टान्त देना सत् परिणामके सम्बन्धमें यह भी एक हास्यकी बात है। यह दृष्टान्त घटित नहीं होता।

सत् व परिणामके परिचयमें प्रदत्त परापर व पूर्वपश्चिम दिशाके कथनकी अयुक्तता — अब १० वीं जिज्ञासामें यह कहा गया था कि सत् परिणाम पूर्व और पश्चिम दिशाकी भाँति उत्पर ऊपरकी भाँति जेठा लहुरा निकट दूर आदिक की भाँति उपचारसे है। अथवा जैसे पूर्व और पश्चिम दिशा अपेक्षासे है स्वयं कौनसी पूर्व दिशा है? कुछ भी नहीं बतायी जा सकती। किन्तु सूर्यकी अपेक्षा लेकर कहा जाता कि यहाँ जिस ओरसे सूर्य उगे वह पूर्व है और पूर्वके जो विरुद्ध हो वह पश्चिम है। तो यों उपचार अथवा अपेक्षासे सत् और परिणामकी सिद्धि है, ऐसा १० वें प्रश्न में कहा गया था। समाधान उसका यह है कि सत् और परिणामको पूर्वापर अथवा पूर्व पश्चिम दिशाकी भाँति उपचारसे या अपेक्षासे मानना विरुद्ध बात है। जैसे पर और अपर जैसी चीजको अभी पर कहा गया है, किसी अपेक्षासे वही चीज अपर भी कही जा सकती है। जैसे बायें हाथकी ओर कोई मन्दिर है और सामने कोई मन्दिर है तो यह कह देते हैं कि सामनेका मन्दिर पर आये व यें हाथकी ओरका मन्दिर अपर जब हम उस बायें हाथ वाले मन्दिरपर पहुंचते हैं तो वह पर और दूसरा अपर। तो पर अपर संज्ञा जिसको दी जाती है वह नियत नहीं है। इस कारण वह उपचारसे माना गया है। पर सत् और परिणाममें यह बात नहीं कि कभी सत्का विषयभूत तत्त्व परिणाम बन जाय और परिणामका विषयभूत तत्त्व द्रव्य बन जाय। नित्य और अनित्य धर्म अपने-अपने स्वरूपमें अपने आपको लिए हुए हैं, इस कारण सत् और परिणामका कथन उपचारसे नहीं कहा जा सकता इसी प्रकार अपेक्षासे भी न कहा जा सकेगा। किसकी अपेक्षासे सत् और परिणाम यह नाम दिया गया अथवा इन दोनोंमें क्या सत्की अपेक्षासे परिणाम है या परिणामकी अपेक्षासे सत् है? सत् नित्य धर्मको लिए हुए, परिणाम अनित्य धर्मको लिए हुए और फिर भी वह स्वतन्त्र नहीं

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

है। एक ही वस्तु इस प्रकारकी है कि जो नित्यानित्यात्मक है तो पूर्व अपर दृष्टान्त एवं पूर्व पश्चिमका दृष्टान्त सत और परिणामके स्वरूपको समझानेके लिये युक्तिसङ्गत नहीं है। पदार्थ है वह ध्रुव है और परिणमनशील है। मूल बात तो यह है कि पदार्थ स्वतः सिद्ध है और स्वतः परिणमनशील है। जो सिद्धत्वकी दृष्टि है वह नित्यताको स्वीकार करती है और परिणमशीलताकी जो दृष्टि है वह अनित्यताको स्वीकार करती है। यों वस्तु स्वयं ही ऐसा है कि वह अनादि अनन्त है फिर भी प्रतिसमय परिणमन करते हुए ही सत् रह पाता है और अनादि अनन्त अपना अस्तित्व रख सकता है। बस यही स्वरूप किसी भाषामें तो कहा ही जायगा उसे स्याद्वाद भाषामें स्याद्वाद शासनकी प्रणालीमें दर्शाया गया है उन्हें किसी भी एकान्त रूपसे माननेमें वस्तुकी स्वतन्त्रताकी सिद्धि नहीं हो सकती।

नार्थक्रियासमर्थो दृष्टान्तः कारकादिवद्धि यतः।
सव्यभिचारित्वादिह सपक्षवृत्तिर्विपक्षवृत्तिश्च ॥ ३८५ ॥

सत् और परिणामके सम्बन्धमें कारकद्वैत आधाराधेयके दृष्टान्तकी असङ्गतता—११ वीं जिज्ञासामें शङ्काकारने यह कहा था कि सत् और परिणाम इस प्रकारसे हैं जैसे कि कारकाद्वैत होते हैं। घटमें जल है, जलमें घट नहीं है। जैसे यहाँ एक आधार है एक आधेय है। घट आधार है, जल आधेय है इसी प्रकार सत् और परिणाममें भी एक आधार है और एक आधेय है और इसमें आधार हो सकता है सत् उसमें पर्यायें रहती हैं। यों सत् और परिणाम आधार आधेय न्यायसे घटमें जलकी तरह होगा, ऐसी शङ्काकारने अपनी बात रखी थी। समाधान उसका यह है कि सत् और परिणामके विषयमें कारक युग्मका दृष्टान्त कार्यकारी नहीं हो सकता, क्योंकि यह दृष्टान्त सपक्ष और विपक्ष दोनोंमें रहता है। और जो हेतु जो बात सपक्षमें भी रहे और विपक्षमें भी रहे वह सब व्यभिचारी है, उससे किसी बातका निर्णय नहीं हो पाता। अब किसी प्रकारसे सपक्ष और विपक्षमें ये कारक युग्म रहते हैं, इस बातका वर्णन करते हैं।

वृक्षे शाखा हि यथा स्यादेकात्मनि तथैव नानात्वे।
स्थाल्यां दधीति हेतोर्व्यभिचारी कारकः कथं न स्यात् ॥३८६॥

भेदपक्ष व अभेदपक्षमें कारकद्वैतके सम्भव होनेसे दृष्टांतकी व्यभिचारिता वृक्षमें शाखा है, यह बात आधार और आधेयके ढङ्गसे कही गई है लेकिन यह बतायें कि वृक्ष क्या अलग है और शाखा क्या वृक्षसे अलग है? वृक्ष और शाखा ये भिन्न भिन्न जगह चीज नहीं है। अगर शाखा न हो और वृक्ष फिर कुछ रह जाय तब तो

http://sahjanandvarnishastra.org/

समझना चाहिए कि वृक्ष आधार है और अलग वस्तु है पर ऐसा तो नहीं है । तो यह अभेद पक्षमें कारक युग्म रह गया, आधार आधेय भाव अभेदमें रह गया और दूसरा दृष्टान्त लीजिये ! जैसे कहा गया कि बटलोहीमें दही है, घड़ेमें दही है, तो यह है भेदपक्षका दृष्टान्त । घड़ा अलग है, दही अलग है फिर उसमें बटलोहीमें बटलोहीको बतलाया आधार और बटलोहीको आधेय, तो यों भेदमें भी आधार आधेयका व्यवहार होता है । तो जब आधार आधेय भेद अभेदमें भी रहता, भेदमें भी रहता तो आधार आधेय भावसे हम भेदको कैसे ग्रहण करलें ? जैसे सत् और परिणाम ये दो तत्त्व स्वतंत्र सिद्ध हो जायें । शङ्काकारका भाव था कि जैसे घटमें जल है तो जल भिन्न वस्तु है, घट भिन्न वस्तु है, फिर भी उनमें आधार आधेय भाव है और बल्कि यह आधार आधेय भाव घट और जलको स्वतंत्र सिद्ध करते हैं । ऐसे ही सत् और परिणाममें चूंकि आधार आधेय भाव है, द्रव्यमें पर्यायें रहती हैं तो आधार आधेय भाव होनेसे ये दोनों स्वतन्त्र सिद्ध होते हैं, यह शङ्काकारका भाव था । जैसे घटमें जल है, यह दृष्टान्त देकर आधार आधेय सिद्ध करके दोनोंको भिन्न भिन्न स्वतन्त्र सिद्ध करना चाहा है लेकिन आधार आधेय भाव भिन्न पदार्थमें ही व्यवहृत होता हो तब तो बात मान ली जाती कि आधार आधेय भाव सपक्षमें ही रहता है, किन्तु आधार आधेय भावमें भी देखा जाता है तो उस पक्षमें भी आधार आधेय भाव बन गया । तो यह विषय साध्यकी सिद्धि करनेमें व्यभिचारी हेतु होगया । तब आधार आधेय भावको व्यवहार बनाकर सत् और परिणामको स्वतन्त्र सिद्ध नहीं किया जा सकता ।

अपि सव्यभिचारित्वे यथाकथञ्चित्सपक्षदक्षश्चेत् ।
न यतः परपक्षरिपुर्यथा तथारिः स्वयं स्वपक्षस्य ॥ ३८७ ॥

सव्यभिचारी कारकद्वैत दृष्टान्तके पक्षमें उभयपक्षका घात – यदि यह कहा जाय कि कारक दृष्टान्त इसमें अव्यभिचारी बन गया अर्थात् आधार आधेयभाव जैसे अभेदमें भी रहता, भेदमें भी रहता, तो भेदमें रहनेकी बात तो सपक्षपनेके साथ और अभेदमें रहने लगे यह हुई विपक्षमें रहने की बात । सो भले ही भेदमें भी रहे आधार आधेय भेद और अभेदमें भी रहे पर भेदमें भी रहा आधार आधेयभाव तो पक्षका तो समर्थन हो ही गया । शङ्काकारका यह तर्क देना असंगत है क्योंकि आधार आधेय भाव भेदमें रह गया पर अभेदमें भी रह जाय, जैसे कि शङ्काकारने अभी स्वीकार कर लिया है तो वहाँ यह निर्णय तो न हो सका कि भेदमें ही आधार आधेय भाव हुआ करता है और जहाँ आधार आधेय भावकी प्रतीति हुई वहाँ भेद ही समझना चाहिए । यह बात तो नहीं बन सकती । और दोनों पक्षोंमें रहनेके समान उस हेतुसे सपक्षकी बात कहकर साध्य सिद्ध करनेका जो आग्रह है वह जिस परपक्षका विघात करनेके लिए कदम उठाये वैसे ही स्वयंके पक्षका भी विघात हो जाता है ।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

आधार आधेय भाव बताकर स्वतंत्र और भिन्न सिद्ध करना चाहते हैं तो आधार आधेय बताकर अभेदका दृष्टान्त देकर एक अभेद भी सिद्ध किया जा सकता है, इस कारण कारक युग्मका दृष्टान्त देकर सत् परिणामको स्वतंत्र सिद्ध करना युक्ति संगत नहीं है।

साध्यं देशांशाद्वा सत्परिणामद्वयस्य सांशत्वम् ।
तत्स्वाम्येकविलोपे कस्यांशा अंशमात्र एवांशः ॥ ३८८ ॥

सत् और परिणामको किसीका अंश बतानेकी असंगतता – अथवा सत् और परिणाम इनको एक देशांश बताकर सत परिणाम दोनोंको अंशमात्र यदि सिद्ध करना हो तो कैसे सिद्ध कर सकेंगे क्योंकि उनका कोई आधार ही नहीं है। सत एक अंश है, परिणाम एक अंश है, पर किसका अंश है वह भी तो कोई तीसरी बात बताओ। तो कोई तीसरी बात विदित नहीं होती। वही वस्तु द्रव्य दृष्टिमें सतरूप दिख रहा है और पर्याय दृष्टिमें वही परिणाम मात्र दिखता है तो पदार्थ तो वह एक ही है। कोई पदार्थ अलग हो और फिर सत और परिणाम उसके अंश होते हों ऐसी बात तो नहीं है। तो शंकाकार देशांशरूपसे सत और परिणाम दोनोंको सांश सिद्ध करना चाहते हैं तो उनका आधार जब कुछ नहीं है तब फिर यह किसीमें अंश सिद्ध नहीं हो सकता। सत और परिणाम, द्रव्य और पर्याय ये किसके अंश हैं, किसीके भी अंश नहीं बल्कि यह कह कह सकते कि अंशमात्र है वही अंशी है और उसीके अंशरूप से देखें तो अशमात्र है। जैसे द्रव्य और पर्याय वस्तु द्रव्यात्मक है यह भी कहा जाता है, पर वस्तु कोई अलग हो और उसमें द्रव्य रहता हो पर्याय रहती तो ऐसा तो नहीं है। वास्तवमें वस्तुके दो अंश हुए ये द्रव्य और पर्यायें सो भी नहीं हैं, बल्कि अंशरूपसे अगर देखते ही हो तो यों दिखेगा कि यह अंशमात्र हैं किसी अंशीके अंश नहीं हैं एक वस्तुको जो कि अवक्तव्य है, अनुभव गम्य है उसे द्रव्यरूपसे कह दिया तो वह अंश मात्र वर्णन हुआ। तो स्वयं तो अंशमात्र बन गए, पर ये किसीके अंश हों यह बात नहीं बनती। शंकाकारके अभिप्रायमें इस कारक युग्मका दृष्टान्त देनेका भाव यह रहा कि सत और परिणाममें कोई एक आधार है और कोई दूसरा आधार है याने या तो सतका परिणाम रहता है या आधार है याने या तो सतका परिणाम रहता है या परिणाममें सत रहता है और ऐसा भी न माने कोई तो कोई इन दोनोंका तीसरा आधार है। यों आधार आधेय भाव सिद्ध करनेका अभिप्राय शंकाकारका है और इस सम्बन्धमें दृष्टान्त भी दिया, ख्याल भी किया, घटमें जल; लेकिन यहाँ आधार आधेय भाव अभेद पक्षमें भी घटित होता, भेदपक्षमें भी घटित होता, इस कारणसे यह प्रकृत में भी उपयोगी नहीं है। और यह भी सिद्ध नहीं किया जा सकता कि सत् और परिणाम ये अंश हैं और अंशी, इससे कोई पृथक है। तब इस सम्बन्धमें यदि कोई

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

सिद्धान्त बताते हो तो यह बताया जायगा कि वस्तु सन्मात्र है, अंशमात्र है। जब द्रव्य दृष्टिसे निरखा जा रहा तो पदार्थ द्रव्यांशमात्र है। जब पर्याय दृष्टिसे पदार्थको निरखा जा रहा तो पदार्थमें अंशमात्र है। यों सत और परिणामको अंशात्मक भले ही सिद्ध करलो, पर वस्तु कोई अलग हो और उसके ये अंश हों ऐसी बात यहाँ सिद्ध नहीं होती।

नाप्युपयोगी क्वचिदपि बीजांकुरवदिहेति दृष्टान्तः।
स्वावसरे स्वावसरे पूर्वापरभावभावित्वात् ॥ ३८९ ॥

बीज और अंकुरके पूर्वापरभावी होनेसे दृष्टान्तकी असङ्गतता— अब ११ वीं जिज्ञासामें सत् और परिणामके विषयमें बीज और अंकुरका दृष्टान्त दिया गया है। वह दृष्टान्त भी सत् और परिणामके रहस्यको जतानेमें असमर्थ है, अनुपयोगी है, बिल्कुल विरुद्ध भी है। क्योंकि बीज और अंकुर तो अपने-अपने अवसरमें होते हैं, इस कारण वह पूर्वापर भावाभावी है। पहिले बीज है उससे अंकुर हुआ, और अंकुर है उससे बीज हुआ। तो ये दोनों पूर्वापर कालमें होते हैं इस कारण यह दृष्टान्त प्रकृत बातके विरुद्ध भी पड़ता है। सत् और परिणाम एक ही कालमें हैं, उनमें यह विभाग नहीं है कि पहिले सत था बादमें पर्याय हुई है। तो बीज और अंकुर का दृष्टान्त सत और परिणामके मर्मको बतानेके लिए अतीव अनुपयोगी है।

बीजावसरे नांकुर इव बीजं नांकुरक्षणे हि यथा।
न तथा सत्परिणामद्वैतस्य तदेककालत्वात् ॥ ३९० ॥

सत् और परिणाममें बिजांकुरके समान पूर्वापर भावित्वका अभाव— बीजके अवसरमें अंकुर जैसे नहीं है ऐसे ही अंकुरके समयमें बीज भी नहीं है, पर सत और परिणामके सम्बन्धमें यह बात कभी नहीं कही जा सकती कि सतके समयमें परिणाम नहीं होता और पर्यायके समयमें सत नहीं होता। द्रव्य और पर्याय सत और परिणाम ये दोनों ही एक समयमें पाये जाते हैं। तो कहाँ तो सत परिणाम एक समय में अविरोधरूपसे वस्तुका ही स्वरूप बनाने वाला भाव है और किसी बीज अंकुरका दृष्टान्त जो कि भिन्न-भिन्न कालमें है, बीजके समय अंकुर नहीं, अंकुरके समय बीज नहीं ऐसा भिन्न काल वाला दृष्टान्त दिया जाता है। दृष्टान्तमें जो बात स्पष्ट घटित और विदित होती है दृष्टान्तमें वही बात शीघ्रतासे लगायी जाती है। तो बीजांकुरमें पूर्वापर समयमें होनेकी बात स्पष्ट है। उस दृष्टान्तसे तो सत और परिणाममें यही सिद्ध होगा कि यह भी पूर्वापर भावी है। सत पहिले हो, पर्याय बादमें हो या पर्याय पहिले हो सत बादमें हो। लेकिन सत और परिणाममें पूर्वापरभाविता एकदम सिद्ध

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

है। क्या यह कल्पना की जा सकती है कि इस लोकमें सबसे पहिले शाश्वत द्रव्य था, पर्याय न थी, पर्याय तो उसके बाद उत्पन्न हुई है। तो इसका अर्थ यह होगा कि सर्वप्रथम द्रव्य समयमें पर्यायरहित द्रव्य था सो पर्यायरहित द्रव्यका कोई सत्त्व ही नहीं, अथवा यह माना जाय कि सर्वप्रथम पर्याय थी उससे द्रव्य निकला है, तो इस बातको थोड़ा भी विवेकी हो वह भी नहीं मान सकता कि सर्वप्रथम अवस्था थी। उससे फिर द्रव्य शाश्वत तत्त्व प्रकट हुआ। दोनों ही अनादिसे हैं और इसी धारा रूपमें अब तक चलते आये है। उन धाराओंमें हम देखते हैं कि मालूम ऐसा पड़नेपर भी कि किसी एक सत द्रव्यसे पर्यायें निकली हैं फिर भी परिणाम सतसे निकला हुआ नहीं कहा जा सकता। सत और परिणाम अनादि कालसे हैं एक ही समयमें हैं और दोनों ही परस्पर गुम्फित हैं। सीधा यों कहो कि वस्तु सतपरिणामात्मक है।

सदभावे परिणामो भवति न सत्ताक आश्रयाभावात् ।
दीपाभावे हि यथा तत्क्षणमिव दृश्यते प्रकाशो न ॥ ३६१ ॥

सत् और परिणाममें सत्का अभाव माननेपर परिणामके अभावका प्रसङ्ग - जिस प्रकार दीपकका अभाव होनेपर फिर प्रकाश नहीं दिखाई देता क्योंकि आश्रय नष्ट होगया। तो यों यदि सत्का अभाव होगया तो आश्रयका अभाव होनेसे परिणामका भी सद्भाव नहीं हो सकता। बीजांकुरके दृष्टान्तमें शङ्काकारका यह कहना था कि सत और परिणाम बीज अंकुरकी तरह होगए। जिससे ध्वनित यह हुआ कि जैसे बीजके नष्ट होनेपर अंकुर होता है और अंकुरके नष्ट होनेपर बीज होता है अथवा ये अपने-अपने समयमें हैं, यों ही सत और परिणाम भी पूर्वापर बन गए। तो जब सत न रहा तो परिणाम कहाँसे आयगा ? तो सतके अभाव होनेपर परिणामका भी अभाव बन बैठेगा। क्योंकि देखा ही जारहा है कि प्रकाशका आधार दीपक है और दीपक न रहे तो प्रकाश नहीं रहता। यहाँ भिन्न आधार आधेयकी बात चल रही है। सत और परिणाममें यदि आधार आधेयपना बन सकता है या आश्रय आश्रयीपना पूछा जा सकता है तो वह दीप और प्रकाशकी तरह देखा जा सकता है। जल घटमें है, इस भांति परिणाम सतमें है न सोचा जायगा, क्योंकि वहाँ पृथक पृथक दो पदार्थ हैं जल और घट तो जल घटकी तरह सत और परिणाममें आश्रयकी बात नहीं निरखी जा सकती। हाँ दीपक और प्रकाश ये दो अलग पदार्थ नहीं हैं इस कारण दीप और प्रकाशकी भाँति सत् और परिणाममें आश्रय आश्रयीकी बात निरखी जा सकती है। सो जैसे दीपकके बुझनेपर प्रकाश नहीं रहता यों ही सत्का अभाव होनेपर परिणाम भी न रह सकेगा।

परिणामोभावेऽपि च सीदति च नालम्बते हि सत्तान्ताम् ।
स यथा प्रकाशनाशे प्रदीपनाशोऽप्यवश्यमध्यक्षात् ॥ ३६२ ॥

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

परिणामका अभाव होनेपर सत्के अभावका प्रसङ्ग—परिणामके अभाव होनेपर भी तो सत् सत्ताका परिणाम प्राप्त नहीं रह सकता। जैसे कि दीपकका नाश होनेपर प्रदीपका नाश आवश्यक है यह बात अब अभिन्न आधेयके अभावमें ही बिना आधारके बात बतला रहे हैं। जैसे ज्ञान न हो तो आत्मा नहीं रह सकता, जैसे प्रकाश न हो तो दीप नहीं रह सकता। दीप और प्रकाशका दृष्टान्त यहाँ उपयोगी है क्योंकि देखा जाता है कि जहाँ प्रकाश नहीं है वहाँ दीपक नहीं। तो इसी प्रकार परिणामका अभाव होनेपर सत् भी नहीं रह सकता। शंकाकारकी शङ्कामें यह बात थी कि बीज अंकुर जैसा सत् परिणाम होता है। कहनेको तो सीधा शीघ्र कह दिया पर उसका धर्म देखा जाय तो तब तुलनामें अन्तरात्मा होता है। बीज और वृक्ष ये अपने-अपने समयमें होते हैं। बीजके कालमें वृक्ष नहीं अंकुर नहीं। अंकुरके कालमें बीज नहीं। तो यों ही सत् परिणाममें बात आ जाती कि जब सत है तब परिणाम न होगा, जब परिणाम है तब सत् न होगा। और दूसरी रीतिसे इसे यों समझें कि सत्का अभाव होनेपर परिणाम होगा, परिणामके अभाव होनेपर सत् होगा लेकिन बात यहाँ ऐसी होती ही नहीं, बल्कि सतका अभाव होनेपर परिणामका भी अभाव है और परिणाम का अभाव होनेपर सतका भी अभाव, और उसके लिए दीप प्रकाशका दृष्टान्त है, क्योंकि सत परिणाम भी अभेद एक वस्तुरूप हैं और दीप प्रकाश भी अभेद एक पदार्थ रूप है। तो ऊपरकी गाथामें कहा गया था कि सतका अभाव होनेपर परिणाम क्यों नहीं रहता? यहाँ कह रहे हैं कि परिणामके अभावमें सत् भी नहीं ठहर सकता।

अपि च क्षणभेदः किल भवतु यदीहेष्टसिद्धिरनायासात्।
सापि न यतस्तथा सति सतो विनाशोऽसतश्च सर्गः स्यात्॥२६३॥

सत् और परिणाममें क्षणभेद माननेपर सत्के विनाश और असत्के उत्पादका प्रसङ्ग—यदि शंकाकार यहाँ यह कहे कि कालभेद मान लेनेपर तो अनायास ही इष्ट सिद्धि बन जायगी। जैसे बीजांकुरमें कालभेद है ऐसे ही सत और परिणाम में कालभेद है। तब भाव अभावके विकल्पकी बात कुछ न रहेगी, ऐसा कथन भी युक्त नहीं है, क्योंकि सत और परिणाममें कालभेद नहीं है। यदि सत परिणाममें कालभेद माना जाता है तो सतका विनाश और असतका उत्पाद सिद्ध हो जायगा। और सत का विनाश नहीं, असतका उत्पाद नहीं। बीज और अंकुरमें समयभेद है पर बीजांकुर के समयभेदकी तरह सत परिणाममें समयभेद नहीं कहा जा सकता। सत परिणामात्मक पदार्थ उसी समय सद्भूत वस्तु है और वही उसी समय परिणम रहा है। परिणमता हुआ रहकर ही वह शाश्वत रह सकता है और जो शाश्वत होगा वही तो परिणमता रहेगा। तो वस्तु सत परिणामात्मक है और सत एवं परिणाम दोनों ही एक समयके धर्म हैं, इस कारण सत और परिणामको बीजांकुरकी तरह मानना युक्त

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

नहीं । न तो बीजांकुरकी भांति सत परिणाम पूर्वापरभावी है और न सत परिणाम बीजांकुरकी भाँति समयभेदमें है और बीजांकुरकी भाँति एकसे दूसरा निकला हो, यह भी बात नहीं है किंतु वस्तु ही सदैव सतपरिणामात्मक हुआ करती है। अतः बीजांकुरका दृष्टांत सत्परिणामके स्वरूपको जाननेके लिए अनुपयुक्त है।

कनकोपलवदिहैष: क्षमते न परीक्षितः क्षणं स्थातुम्।
गुणगुणिभावाभावाद्यतः स्वयमसिद्धदोषात्मा ॥ ३६४ ॥

सत् और परिणामके परिचयके सम्बन्धमें कनकोपल दृष्टांतकी प्रसङ्गतता—सत् और परिणामके विषयमें कनकोपलका दृष्टान्त भी परीक्ष करनेपर क्षणमात्र नहीं ठहर सकता। कनकोपलमें गुण गुणी भाव नहीं है। इस कारण वहाँ स्वयं असिद्ध नामका दोष आता है। इस प्रसङ्गमें सत् परिणामात्मक वस्तु सिद्ध की जाना योग्य है। उसकी सिद्धिमें कनकोपलका दृष्टान्त यों युक्ति संगत नहीं होता कि वहाँ कनक और पाषाण दो द्रव्य सम्मिलित हैं। सत् और परिणाम ये दो द्रव्य नहीं हैं, इसका सम्मेलन है किन्तु वस्तु ही स्वयं सत् परिणामात्मक है। स्वर्ण जिन अणुओं में है, जिन रूपोंमें है वह स्वर्ण है और वह पाषाण मिट जाना अणुओं में है व उनमें है। खानमेंसे जो स्वर्ण पाषाण बनता है विधिसे तपानेपर समझिये कि १० मनके पत्थरपर एक तोला स्वर्ण निकला पर जो विधिपूर्वक एक तोला सोना निकला उसे अगर व्यक्तरूपसे रखा गया, उसके अणु अणुमें १० मनके पाषाणमें यत्र तत्र पड़ा हुआ था और इतने अव्यक्तरूपमें पड़ा था कि उसे संस्कृत किए बिना वह स्वर्ण अणु प्रकट नहीं हो सकता था। तो कनक और उपल ये दोनों द्रव्य जो स्वतंत्र हैं। मिले हुए हैं एक पिण्डमें यों सत् और परिणाम स्वतंत्र हों, द्रव्य हों और फिर मिले हुए हों, एक पदार्थमें ऐसा नहीं है।

हेयादेयविचारो भवति हि कनकोपलद्वयोरेव।
तदनेकद्रव्यत्वान्न स्यात्साध्ये तदेकद्रव्यत्वात् ॥ ३६५ ॥

कनकोपलमें हेयादेय विचारकी तरह सत् और परिणाममें हेयादेय विचारका अनवकाश—कनक और पाषाणमें यह विचार चलता है कि कोई एक हेय है कोई एक उपादेय है, कौन हेय और कौन उपादेय है, ये दोनों स्वतंत्र द्रव्य हैं ना। यद्यपि लौकिक इच्छाके हिसाबसे उपलका अंश हेय है और स्वर्ण अंश उपादेय है, किन्तु यहाँ इस लौकिक हेय उपादेयकी बात नहीं कही जा रही, उसमें कोई स्वार्थ का कारण है। पर यहाँ न्यायके अनुसार यह बात कही जा रही कि स्वरूप दृष्टिसे जब दोनोंकी समानता है कनक भी स्वतंत्र है, पाषाण भी स्वतंत्र है तो जब दोनोंकी

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

स्वतंत्रता है तो उसमें अब कौन हेय और कौन उपादेय होगा ? किसी एकको हेय बतानेपर यह प्रश्न रहेगा कि वह क्यों नहीं हेय रहा ? तो कनक और पाषाणमें यह विचार चलेगा कि कौन हेय है कौन उपादेय है, क्योंकि वह स्वतंत्र द्रव्य है, परन्तु ऐसा विचार इस प्रगतिमें न चल सकेगा, क्योंकि सत् परिणामात्मक एक द्रव्य है। वहाँ दो स्वतंत्र चीजें नहीं हैं–सत् और परिणाम जिससे कि वहाँ यह विचार चल सके कि परिणाम हेय है सत् उपादेय है या सत् हेय है परिणाम उपादेय है। नीतिके अनुसार बात कही जा रही है. वहाँ तो लौकिक प्रयोजनमें उपलको हेय और कनकको उपादेय मान लिया जा सकता है। तो यहाँ भी अलौकिक प्रयोजनकी सिद्धिमें जिस पुरुषको विनश्वर तत्त्वमें रुचि नहीं किन्तु अविनाशी सहज तत्त्वकी रुचि है वह पर्याय को हेय समझेगा और द्रव्यको उपादेय समझेगा। पर्यायको हेय न समझेगा किन्तु पर्यायपर दृष्टि करनेको हेय समझेगा और द्रव्यपर, स्वरूपपर दृष्टि करना उपादेय समझेगा। तो यह भी उसके प्रयोजनकी ही बात है, किन्तु स्वतंत्रताके नातेसे सत् और परिणाममें कौन हेय होगा कौन उपादेय होगा यह निर्णय न किया जा सकेगा सो सत् और परिणाम इस तरहके स्वतंत्र हैं ही नहीं। एक ही वस्तु सत् परिणामात्मक है। अतः कनक पाषाणका दृष्टान्त सत् परिणामात्मक वस्तुका समर्थक नहीं बन सकता इस कारण यह दृष्टान्त असिद्ध है।

वागर्थद्वयमिति वा दृष्टान्तो न स्वसाधनायालम्।
घट इति वर्णद्वैतात् कम्बुग्रीवादिमानिहास्त्यपरः ॥३८६॥

सत् और परिणामके परिचयके सम्बन्धमें वचन व अर्थके दृष्टान्तकी असंगतता— १४ वीं जिज्ञासामें वचन और अर्थका दृष्टान्त बताया गया था कि सत् और परिणाम वचन और अर्थकी तरह होगा। सो वह दृष्टान्त साध्यकी सिद्धि करने में समर्थ नहीं है, क्योंकि घट इन दो वर्णोंसे वह पदार्थ घट जो मिट्टीका बना हुआ है वे दोनों चीजें हैं। पर सत् और परिणाममें ऐसा नहीं है कि सत्से भिन्न चीज परिणाम हो. दृष्टान्तमें वचन और अर्थकी बात कही जा रही थी। वचन हुआ वह शब्द जो अर्थका संकेत करता है और अर्थ हुआ वह मृत घट सो वचनसे घट भिन्न है, यों सत्से परिणाम भिन्न नहीं है अतएव वचन और अर्थका दृष्टान्त साध्यकी सिद्धि करने में समर्थ नहीं है।

यदि वा निःसारतया वागेवार्थः समस्यते सिद्ध्यै।
न तथापीष्टसिद्धिः शब्दवदर्थस्याप्यनित्यत्वात् ॥३८७॥

वचन और अर्थ कर्मधारय समास करके दृष्टान्त बनानेमें शब्दकी अर्थ

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

को अनित्यता सिद्ध हो जानेसे इष्टसिद्धिका अभाव–जो दृष्टान्त निसार बताया गया उक्त गाथामें उस वचन अर्थके दृष्टान्तसे सत् और परिणामका मर्म नहीं समझा जा सकता है। अब यदि शङ्काकार वचन और अर्थ इन दोनोंमें वचन ही अर्थ है ऐसा समास करके बोले और वचन और अर्थ दोनोंको अभेद करले तब भी इष्टकी सिद्धि नहीं होती। यदि यों कह दिया कि वचन ही अर्थ है तो जैसे वचन अनित्य है वैसे ही अर्थ भी अनित्य बन बैठेगा। यहाँ वचन और अर्थके दृष्टान्तको दो प्रकारसे रखा गया है। एक भेद पक्षकी पद्धतिसे दूसरा अभेद पक्षकी पद्धतिसे। सो वचन और अर्थ यदि भेद पद्धतिमें लिए जायें तो सत् परिणाम चूंकि भिन्न भिन्न नहीं हैं इसलिए वह दृष्टान्त संगका समर्थक नहीं बन सकता और वचन ही अर्थ है ऐसा कहकर वचन और अर्थका दृष्टान्त सत् परिणामको सिद्ध करनेके लिए बनाया जाय तो यह भी युक्ति संगत नहीं बनता क्योंकि ऐसा माननेपर जैसे वचन अनित्य है इसी प्रकार पदार्थ भी अनित्य हो जायगा। यों १४ वीं जिज्ञासामें सत और परिणामको वचनार्थकी तरह बतानेका प्रयास किया था वह युक्तिसङ्गत नहीं है, किंतु ऐसा ही मानना होगा कि कोई वस्तु सत् है वह स्वयं ही सत् परिणामात्मक है, क्योंकि सत् स्वतः सिद्ध होता है और स्वतः परिणामी होता है। ऐसा माने बिना भेद दृष्टि करके शक्ति पर्याय द्रव्य सब त्रुटित करके स्वतन्त्र द्रव्य मान लेना जैसा एकान्त प्राप्त हो जायगा, इससे वस्तु को स्वतःसिद्ध मानना और स्वतः परिणामी मानना ही युक्त है।

स्यादविचारितरम्या भेरीदण्डवदिहेति सदृष्टिः।
पक्षाधर्मत्वेपि च व्याप्यासिद्धत्वदोषदुष्टत्वात्॥ ३६८॥

सत् और परिणामके परिचयमें भेरीदण्डके दृष्टान्तकी अयुक्तता— १५ वें जिज्ञासुने भेरी दण्डका दृष्टान्त दिया था कि जैसे भेरी और दण्ड दोनोंके संयोगसे विवक्षित कार्यसिद्धि होती है इसी प्रकार सत और परिणामके संयोगसे ही विवक्षित सिद्धि होती है यह दृष्टांत भी बिना विचारे ही कहा गया है क्योंकि पक्ष धर्मका अभाव होनेसे यह स्वयं व्याप्य असिद्ध दोषसे दूषित है। भेरी और दण्ड जिस प्रकार संयोग होकर कार्यकारी हैं, हैं अलग–अलग पर अलग–अलग रहकर न भेरीसे कषाय बनती है न दण्डसे, किंतु भेरी और दण्डका संयोग होनेपर ध्वनि होना, ध्वंस होना, जो कि विवक्षित कार्य हो वह सिद्ध होता है। इस तरह सत और परिणाममें नहीं कह सकते। सत और परिणाम जुदे–जुदे पदार्थ हों फिर उनका संयोग हो और उससे फिर कोई अर्थक्रिया हो, ऐसा यहाँ है ही नहीं, क्योंकि सत और परिणामका परस्परमें तादात्म्य सम्बन्ध है। जब कोई दण्डके समान सत परिणामको सिद्ध करने चलेगा तो व्याप्यमें सिद्ध दोष आता है याने जो बात भेरी दण्डामें बता रहे हैं वह प्रकृतमें है ही नहीं, इस कारण भेरी डण्डाका दृष्टान्त अयुक्ति सङ्गत है।

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

युतसिद्धत्वं स्यादिति सत्परिणामद्वयस्य यदि पक्षः।
एकस्यापि न सिद्धिर्यदि वा सर्वोऽपि सर्वधर्मः स्यात् ॥३९९॥

भेरीदण्डकी तरह सत् और परिणामको युतसिद्ध माननेपर विडम्बना का वर्णन – अब सत् और परिणामके सम्बन्धमें भेरी डंडाका दृष्टान्त देने वाले यही तो कह रहे हैं कि दोनों प्रथक-प्रथक सिद्ध हैं, सो जैसे भेरी और डंड न्यारे-न्यारे दो पदार्थ हैं इसी प्रकार सत् और परिणाम ये भी न्यारे-न्यारे दो पदार्थ स्वीकार किए जाते हैं। तब एककी भी सिद्धि नहीं होती। परिणामस्वरूप हुए बिना है क्या, सत्-स्वरूप हुए बिना परिणाम किसका ? तो दोनोंको प्रथक सिद्ध माननेपर सत् और परिणाम इनमेंसे एककी भी सिद्धि नहीं होती। और यदि युतसिद्ध होनेपर भी सत् परिणामको एक जगह मानकर अर्थक्रियाकी बात कही जाय और शुद्ध समझ लिया जाय तो सभी पदार्थ, समस्त धर्म वाले सिद्ध हो जायेंगे क्योंकि जब प्रथक सिद्ध हैं उनमें यह विभाग तो नहीं बनता कि कौन किसका धर्म हैं, कौन किसका धर्मी है ? यदि कहोगे कि सत्में परिणाम रहता तो कोई यह नहीं कह सकता कि परिणाममें सत् रहना और सत् और परिणामके अतिरिक्त जो कुछ भी हो उसमें भी सब रहना, तो प्रथक सिद्ध माननेपर वस्तु स्वरूपकी व्यवस्था नहीं बन सकती और प्रथक सिद्ध होनेपर भी फिर भी स्वरूप व्यवस्था बनानेका यत्न करेंगे तो सभी पदार्थ सभी धर्म वाले सिद्ध हो जायेंगे, इस कारण प्रकृतमें जो भेरी डंडका दृष्टान्त दिया गया है यह उपयोगी नहीं है। तब भेरी दंडके समान सत् परिणामको प्रथक प्रथक मानना असंगत है और भेरी दडके जिसका कार्य हुआ मानो इस तरह सत् और परिणानके संयोगसे कार्य होता है ऐसा मानना भी गलत है।

इह पदपूर्णन्यायादस्ति परिचायमो न दृष्टान्तः।
अविशेषत्वापत्तौ द्वैताभावस्य दुर्निवारत्वात् ॥४००॥

पदपूर्णन्यायवत् सत् और परिणामको माननेपर द्वैताभावका प्रसङ्ग– सत् और परिणामके परिचयमें पदपूर्ण न्यायका दृष्टान्त भी अयुक्त है इस कारण कि तब तो दोनोंमें ही अविशेषताकी आपत्ति आती है, और अविशेषता होनेपर द्वैतका अभाव दुर्निवार होता है अर्थात् वहाँ फिर दो चीजें ही नहीं रहती। पदपूर्ण न्यायमें यह बताया गया था कि जिस किसी वाक्यमें कोई पद उदासीनरूपसे कहा जाता है जैसी कि रुचि हो और उस एकके कहनेसे ही साध्यकी सिद्धि हो जाती है, इस तरह सत् और परिणाममें भी यदि एकको उदासीन मानकर कार्यकी सिद्धि मानते हैं तो उदासीनताके मायने यह है चाहे यह कहलो, चाहे दूसरेको कहलो, याने चाहे सत्

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

कहलो, चाहे परिणाम कहलो दोनोंमें समानता आ जाती है और जब दोनोंमें कोई विशेष न रहा तो वे दो क्या रहे वे सब एक ही बन गए। दूसरी बात दोषकी यह उपस्थित होती है जिसे कि अगली गाथामें कह रहे हैं।

अपि चान्यतरेणविना यथेष्टसिद्धिस्तथा तदितरेण।
भवतु विनापि च सिद्धिः स्यादेवं कारणाद्यभावश्च ॥४०१॥

पदपूर्णन्यायवत् किसी एकसे इष्टसिद्धि माननेपर कार्यकारणके अभावका प्रसङ्ग—दूसरा दोष यह है कि जिस प्रकार किसी एकके बिना इष्टकी सिद्धि हो जाती है उसी प्रकार उससे भिन्न दूसरेके बिना भी इष्टकी सिद्धि हो जाना चाहिए और कार्य कारणका अभाव हो जायगा। पदपूर्ण न्यायमें यह बताया गया था कि किसी एक पदके देनेसे काम चल जाता है दोनोंकी आवश्यकता नहीं रहती। यदि ऐसे सत् और परिणामको माना जायगा तो दोमेंसे कोई भी शेष न रहेगा। अथवा दोमेंसे कोई एक शेष रहेगा। बात ऐसी नहीं है, सत् और परिणाम इन दोनोंमेंसे किसी एकका भी त्याग नहीं किया जा सकता। वह तो तादात्म्य सम्बन्धसे रहता है, सत् न माननेपर परिणाम कुछ भी नहीं रहता। परिणाम न माननेपर सत् कुछ भी नहीं रहता। सत् परिणामात्मक ही पदार्थ है इस कारण पदपूर्ण न्यायसे दृष्टान्त देना सत् परिणामके परिचयके लिए बिल्कुल निसार बात है, क्योंकि यहाँ ऐसा नहीं है कि सत् और परिणाममें किसी एकको उदासीन कर देवे तो विवक्षित कार्य बन जाय। वस्तु सत् परिणामात्मक है, द्रव्य पर्याय स्वरूप है।

मित्रद्वैतवदित्यपि दृष्टान्तः स्वप्नसन्निभोऽहि यतः।
स्याद्गौरवप्रसङ्गाद्धेतोरपि हेतुहेतुरनवस्था ॥४०२॥

सत् और परिणामको मित्रद्वैतके समान एकको प्रधान व दूसरेको सहकारी माननेपर अनवस्था—अब १७ वीं जिज्ञासामें शङ्काकारने यह प्रकट किया था कि सत् और परिणाम दो मित्रके समान हैं। जैसे दोनों मित्रोंमें एक मुख्य होता है दूसरा सहकारी होता है ऐसे ही सत् और परिणाममें कोई एक मुख्य है और दूसरा सहकारी है। यह दृष्टान्त भी स्वप्नके समान केवल प्रलापमात्र है क्योंकि प्रथम तो इसमें गौरव दोष आता है। दूसरा अवस्था दोष आता है। जैसे सत् और परिणाममें किसी एकको प्रधान मान लिया दूसरेको सहकारी कारण माना तो प्रधानमें कार्य करनेकी जो क्षमता आयी है वह सहकारी कारणके क्षमतासे आयी है। तब सहकारी कारणमें यह क्षमता कैसे आ गई कि वह प्रधान कारणमें कार्यकी योग्यता ला देवे। उसके लिए फिर दूसरा हेतु मानना होगा। फिर उस हेतुमें भी यह प्रश्न होगा कि

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

इसमें भी दूसरेमें भी कार्य क्षमता लानेकी योग्यता कैसे आयी उसके लिए अन्य कारण मानना इस तरह उत्तरोत्तर हेतुकी कल्पना करते चले जायेंगे, कहीं भी समाप्ति नहीं हो सकती है। अतः मित्राद्वैतके समान सत् परिणामको समझनेमें गौरव और अनवस्थाका दोष आता है।

तदुदाहरणं कश्चित् स्वार्थं सृजतीति मूलहेतुतया।
अपरः सहकारितया तमनुतदन्योऽपि दुर्निवारः स्यात् ॥४०३॥

मित्राद्वैतवत् परिणामको माननेपर आने वाले अनवस्था दोषका विवरण — उक्त अनवस्था दोषका विवरण इस प्रकार है कि मित्राद्वैतमें यह ही कल्पनाकी गई थी कि कार्य करने वाला एक है दूसरा मित्र सहकारी है। तो जो कार्य करने वाला है वह कहलाया उपादान कारणके समान, और जो दूसरा सहकारी है वह हो गया सहकारी तो कोई उपादान कारण बनकर कार्यको उत्पन्न करे और दूसरा सहकारी बनकर उस कार्य क्षमताको उत्पन्न करे तो इसके बाद उस द्वितीय सहकारी कारणमें जो कार्यक्षमता उत्पन्न करनेकी योग्यता हुई वह किसके द्वारा हुई? उससे भिन्न और कोई कारण मानना होगा। यों उत्तरोत्तर कारणोंकी कल्पना करने पर अनवस्था दोष आता है।

कार्यं प्रतिनियतत्वाद्धेतुद्वैतं न ततोऽतिरिक्तं चेत्।
तन्न यतस्तन्नियमग्राहकमिव न प्रमाणमिह ॥ ४०४ ॥

उक्त अनवस्थादोष मेटनेके लिए कार्यके प्रति दो ही हेतुओंका नियम बनानेका शंकाकारका व्यर्थ प्रयास — अब शंकाकार उक्त अनवस्था दोषको मिटाने के लिए कह रहा है कि प्रत्येक कार्यके एक उपादान और दूसरा सहकारी ऐसे दो हेतु हुआ करते हैं और उन दोके सिवाय अन्य हेतुओंकी आवश्यकता नहीं पड़ती। समाधानमें कहते हैं कि इस बातको सिद्ध करने वाला कोई प्रमाण नहीं है कि कार्यमें एक उपादान और एक सहकारी दो ही हेतुकी आवश्यकता होती है। प्रकृतमें जो प्रसङ्ग चल रहा है उस वातावरणमें इस नियमका ग्राहक कोई प्रमाण नहीं हो सकता। इस कारण मित्राद्वैतके समान एक उपादान और दूसरे सहकारी कारणकी भाँति सत और परिणामको मानना युक्त नहीं है। यद्यपि यह बात युक्तिसङ्गत है कुछ कि हाँ प्रत्येक कार्यमें उपादान कारण और सहकारी कारण होता है लेकिन यहाँ जो विवरण बनाया है मित्राद्वैतकी तरह सत परिणामको माननेके लिये उन भिन्न पदार्थोंमें उपादान सहकारी भाव माननेमें तो बात बन जाती है। पर सत और परिणाम जहाँ एक ही तादात्म्यरूपसे वस्तुमें रह रहे हैं उसमें जब यह विभाग कर दिया गया कि सत उपा-

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

दान है और सत् सहकारी है तो वहाँ फिर अनवस्था दोष दूर करनेका कोई अवसर नहीं रहता। इससे वस्तुको क्षत् परिणात्मक मानना चाहिए, और जैसे वस्तु स्वत: सिद्ध है उसी प्रकार स्वत: परिणाम है यह बात स्वीकार कर लेनी चाहिए।

एवं मिथो विपक्षद्वैतवदित्यपि न साधुदृष्टान्तः।
अनवस्थादोषत्वाद्यथारिरस्यापरारिरपि यस्मात् ॥ ४०५ ॥

शत्रुद्वैतकी तरह सत् और परिणामको परस्पर विपक्ष माननेमें अनवस्थानोषापत्ति—इसी प्रकार सत और परिणामके सम्बन्धमें जो शत्रुद्वैतका दृष्टान्त दिया गया है वह भी अनवस्था दोषसे मुक्त नहीं है। जैसे कि कोई विवक्षित एक पुरुष दूसरेका शत्रु है तो उस दूसरेका तीसरा भी शत्रु होता है इस तरह उत्तरोत्तर शत्रुमें परम्परा चालू रहेगी। तब अनवस्था दोष आता है। वस्तुके जिस कालमें जैसी पर्याय प्रकट होनेकी योग्यता है उस अनुसार कार्य होता है यह सामान्य नियम है, पर इस नियमके रहते हुए सत और परिणामको शत्रुद्वैतके समान माने तो वह युक्तिसंगत नहीं। शत्रुद्वैत यह ही तो बताया गया था कि एक शत्रु दूसरेसे विमुख है तो इस प्रकार सत् और परिणाम यदि परस्पर एक दूसरेसे विमुख हैं तो विमुख हुए दोनों धर्म एक पदार्थमें कार्य कर नहीं हो सकते। सत और परिणाम तो वस्तुस्वरूपमें है और जैसे वहाँ निमित्त उपादान पूर्वक किसी अन्य पदार्थका कारण पाकर कार्य होता है। तत्त्व वहाँ इतना ही है कि जैसे पदार्थ कोई स्वत:सिद्ध है तो वह स्वत:सिद्ध परिणामी भी है। तो शत्रुकी तरह सत परिणामको माननेपर उसमें तीसरी चीजकी कल्पना करनी पड़ेगी और तीसरा कुछ शत्रु माना गया तो फिर अन्य भी माना जाना चाहिए। यों शत्रुकी परम्परा पूर्ण न हो सकेगी। और यों सत् परिणाम मूलकी भी सिद्धि न हो सकेगी।

कार्यं प्रतिनियतत्वाच्छत्रुद्वैतं न ततोऽतिरिक्तं चेत्।
तन्न यतस्तन्नियमग्राहकमिव न प्रमाणमिह ॥ ४०६ ॥

शत्रुद्वैतवत् सत परिणामको माननेपर आपन्न अनवस्था दोषको मेंटनेके लिए कार्यके प्रति दो ही शत्रुको प्रतिनियत माननेका शङ्काकारका प्रयास—यदि उत्तरोत्तर शत्रुकी परम्परा चालू रहती कि अनवस्था दोष मिटानेको यह कहा जाय कि प्रत्येक कार्यके दो शत्रू नियत होते हैं। दोसे अधिक शत्रू नहीं होते हैं तो यह कहना भी ठीक नहीं है क्योंकि कार्यमें दो ही शत्रू हुए। इस नियमका ग्रहण करने वाला कोई प्रमाण नहीं पाया जाता। तब सत् और परिणाम शत्रुद्वैतके समान न माने, किंतु वस्तु है और उसमें परिणमनका स्वभाव है शाश्वत रहनेकी द्रव्यरूपता है,

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

वस्तु एक है, अवक्तव्य है। उस वस्तुको समझानेके लिए भेददृष्टिसे भेद करके सत् और परिणामरूपमें ऋषि-संतोंने जिज्ञासुको समझाया है। वस्तुत: पदार्थ स्वयं ही सत् परिणामात्मक है।

नेतरकरवर्तितरज्जूयुग्मं न चेह दृष्टान्तः।
बाधितविषयत्वाद्वा दोषात् कालात्ययापदिष्टत्वात् ॥४०७॥

सत और परिणामके परिचयमें प्रस्तुत वामेतरवर्ति रज्जुयुग्म दृष्टांत की बाधितविषयता— सत और परिणामके परिचयके लिए १६ वें जिज्ञासुने दायें और बायें हाथमें रहने वाली दो रस्सियोंका दृष्टान्त दिया था कि जैसे दो रस्सियाँ परस्पर एक दूसरेकी विरुद्ध दिशाकी ओर चलती हैं और वहाँ गोरससे घीकी सिद्धि हो जाती है। दही मथते समय जो मथानी मथी जाती है उसकी रस्सी यदि एक मथने वालेकी ओर आती है तो दूसरी छोर उसके विमुख जाती है और ऐसी स्थितिमें वहाँ घीकी सिद्धि होती है। ऐसे ही क्या सत् और परिणाम है कि दोनोंका मुख विमुख हो, सत् किसी ओर जाय, परिणाम किसी ओर जाय तब जाकर सिद्ध हुआ। ऐसा दृष्टान्त युक्तिसङ्गत नहीं है, क्योंकि इसके दृष्टान्तमें दो दोष आते हैं—एक वाधित विषय, दूसरा कालात्ययापदिष्ट वाधित विषय होनेसे ही कालात्ययापदिष्ट ही दृढ़ हो जाता है। वाधित विषय इस प्रकार है कि दृष्टान्तमें तो उन रस्सियोंके परस्पर विमुख गमन द्वारा वहाँ रससे भिन्न किसी गोरसकी सिद्धि की गई है, पर यह सत परिणामसे भिन्न किसी तीसरी बातकी सिद्धि तो नहीं होती? पदार्थ ही वह एक है और सत् परिणामात्मक है। जैसे मथानीको दो रस्सियोंसे घुमाया मथा गया तो चीज क्या बनी? मथानीसे भिन्न, रस्सियोंसे भिन्न, मथने वालेसे भिन्न कोई गोरसमें दही परिणमनकी सिद्धि होनेसे तो यह सत और परिणामको यों ही मथा जाय तो उससे तीसरी क्या चीज सिद्ध होनेको है? इस कारण यह स्पष्ट वाधित विषय है। और इसी कारण कालात्ययापदिष्ट है।

तद्वाक्यमुपादानकारणसदृशं हि कार्यमेकत्वात्।
अस्त्यनतिगोरसत्वं दधिदुग्धावस्थयोर्यथाध्यक्षत्वात् ॥ ४०८ ॥

रज्जुयुग्म दृष्टान्तमे वाधित विषय दोषका विवरण—उक्त गाथामें कहे गये दोषका ही विवरण इस गाथामें किया जा रहा है कि प्रत्येक कार्य अभेद होनेसे अपने उपादानकारणके समान होते हैं। गोरसमें जो कुछ भी प्रकट होगा वह गोरसके अनुरूप होगा। मिट्टीसे जो कार्य बनेंगे घड़ा अथवा और और प्रकारके बर्तन या घड़ा होगा तो सब मिट्टीरूप ही तो प्रत्येक कार्य उपादानकारणके सदृश ही हुआ

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

करते हैं। उदाहरणमें जो रस्सियोंका दृष्टांत लिया है और दही-दूधके मन्थनकी बात कही है तो वहाँ होता क्या है कि जो भी दूधमें पर्याय बनेगी वही बने तो गोरसमें अनुरूप घी बने तो गोरसके अनुरूप कोई भी अवस्था गोरसका उल्लंघन नहीं कर सकती, यह बात प्रत्यक्षसे ही सिद्ध है। तो दृष्टांतमें जैसे यह बात स्पष्ट है उसकी दृष्टान्तमें कोई तुलना नहीं है। दृष्टान्तसे तो यह विदित होता है कि शङ्काकारने सत और परिणामको निमित्त कारणरूपसे पेश किया है। जैसे वे दोनों दायीं बायीं रस्सियां निमित्त कारण ही तो हैं, वे रस्सियाँ खुद गोरसकी अवस्थायें तो नहीं बन जातीं। तो इसी तरह जब सत् और परिणामको निमित्त कारण रूपसे इस दृष्टान्त द्वारा ध्वनित किया है तो अब यह बतलाओ कि कार्यसिद्धि होना क्या है ? उस सत परिणामसे भिन्न किसी अन्य वस्तुमें कोई कार्य बताना है क्या ? इसी कारण तो दृष्टान्तसे इस प्रकृत बातका मेल नहीं है, विषय ही बाधित है। दही और दूध ये दोनों कार्य हैं और वे गोरसमय हैं। गोरससे जुदा न तत्त्व है न दही है। तो यहाँ दो रस्सियोंसे भिन्न गोरसकी बात सिद्ध की है लेकिन प्रकृतमें तो सत् परिणामसे भिन्न कोई कार्य नहीं मालूम होता है। इस कारण प्रत्यक्षबाधित यह दृष्टान्त है। जो बाधित होता है उसीका नाम कालात्ययापदिष्ट है। तब सत् और परिणामका परिचय देनेमें दो रस्सियोंका दृष्टान्त युक्तिसङ्गत नहीं होता।

अथचेत्नादिसिद्धं कृतकत्वापन्हवात्तदेवेह ।
तदपि न तद्द्वैतं किल त्यक्तदोषास्पदं यदत्रैतत् ॥ ४०६ ॥

उन्नीसों दृष्टान्तोंकी सदोषतासे बचनेका अनवकाश-सत् और परिणाम के परिचयमें १६ प्रकारकी जिज्ञासायें जिज्ञासुओंने प्रकट की थीं, उन सबका समाधान दिया गया। उन दृष्टान्तोंमें दोष पाये गए। अब यदि उन दोषोंसे बचनेके लिए यह स्वीकार किया जाता है कि सत् और परिणाम तो अनादि सिद्ध हैं, क्योंकि उनमें कृतकपना नहीं पाया जाता। वे किसीके कार्य नहीं हैं और उन पदार्थोंमें ऐसी प्रतीति होती है कि यह वही है। तो यों सत् और परिणाम दोनोंको सर्वथा नित्य मान लेने पर फिर युक्त कोई दोष न आयगा, क्योंकि सत् और परिणामका कोई स्पष्ट कार्य नहीं दिखाई दे रहा तो उन्हें अनादि अनन्त मान लेना चाहिए। और ऐसा अनादि सिद्ध मान लेना कोई असङ्गत बात नहीं है क्योंकि प्रत्येक पदार्थके सम्बन्धमें लोगोंकी यह प्रतीति रहा ही करती है कि यह वही है। उक्त शङ्काके समाधानमें यहाँ केवल इतना ही संकेत किया जा रहा है कि उन दोषोंसे बचनेके लिए सत् और परिणामको सर्वथा नित्य माननेकी जो बात कही जा रही है वहाँ भी अनेक दोष उपस्थित होते हैं। वे क्या दोष उपस्थित होते हैं उसका वर्णन अब इस प्रकरणमें आयगा।

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

दृष्टान्ताभासा इति निक्षिप्ताः स्वेष्टसाध्यशून्यत्वात् ।
लक्ष्योन्मुखेषव इव दृष्टान्तास्त्वथ यथा प्रशस्यन्ते ॥ ४१० ॥

सत् और परिणामके परिचयमें शंकाकार द्वारा प्रस्तुत उन्नीसों दृष्टान्तोंकी दृष्टान्तभासता अभी सत् और परिणामकी नित्यताके सूचक भी अनेक दृष्टान्त अपने साध्यकी सिद्धि करनेमें असफल रहे अतएव वे दृष्टान्त नहीं किन्तु दृष्टान्ताभास हैं । जो लक्ष्यके अनुसार फेके गए बाणोंकी तरह अपने साध्यकी सिद्धि करनेमें समर्थ हों । जैसे कोई धनुधारी पुरुष लक्ष्य लेकर कोई बाण चलाता है तो उसका वह बाण वहाँ अपना निशाना बनाता है तो बाण जैसे अपने निशाने पर पहुंच ही जाता है इस तरह जो जो भी दृष्टान्त सच्ची जैसी बातको सिद्ध करनेके लिए पूरे तौरसे उस दृष्टान्तके धर्ममें आ ही जायें ऐसा दृष्टान्त हो तो वह प्रशंसनीय है । किन्तु जो दृष्टान्त विरोधका साधन कर दे अथवा कुछ साधन न कर सके अथवा दृष्टान्तमें तो कुछ और ही बात है, दृष्टान्त किसी और ही प्रकरणको लिए हुए हैं तो वह सब प्रकृत बातको सिद्ध करनेमें असमर्थ होनेसे दृष्टान्ताभास कहा जायगा । यों समझिये कि अब तक जिज्ञासुओंने सत् और परिणामका परिचय देनेके लिए जो जो दृष्टान्त दिए हैं वे सब दृष्टान्ताभास हैं ।

सत्परिणामाद्वैतं स्यादभिन्नप्रदेशवत्वाद्वै ।
सत्परिणामद्वैतं स्यादपि दीपप्रकाशयोरेव ॥ ४११ ॥

सत् और परिणामकी दीप और प्रकाशकी तरह अभिन्न प्रदेशवत्ता – जैसे कि दीप और प्रकाश ये अभिन्न प्रदेशवान हैं दीप कहीं अलग रहता हो, प्रकाश कहीं अलग हो ऐसा तो नहीं पाया जाता । तो दीप और प्रकाश जैसे अभिन्न प्रदेशी होनेसे जिस प्रकार इसमें अद्वैत है सो अद्वैत है दीप और प्रकाश एक बात है, लेकिन संज्ञा अलग है, लक्षण अलग है आदिक अपेक्षाओंसे इनमें कथंचित द्वैत भी तो है । इसी प्रकार सत् और परिणाम ये भिन्न प्रदेशमें नहीं पाये जाते, जैसे कि द्रव्यस्वरूप तो कहीं अन्य प्रदेशोंमें हो और परिणमनकी बात किन्हीं अन्य प्रदेशोंमें हो । वही एक पदार्थ सत्परिणामात्मक है इस कारण तो अद्वैत है लेकिन द्रव्यस्वरूप द्रव्यदृष्टिसे निरखा जाता है, वहाँ नित्यत्व धर्म विदित होता है । परिणाम स्वरूप पर्याय दृष्टिसे देखा जाता है और वहाँ अनित्यत्व विदित होता है । तो यों सत् और परिणाममें संज्ञा लक्षण प्रयोजन दृष्टि आदिक अपेक्षासे परस्पर भेद भी तो है । इस कारण जैसे सत्में नित्यत्वकी दृष्टि मुख्य है उस प्रकार परिणामको नित्य नहीं कहा जा सकता । और चूंकि उस पदार्थमें सत् और परिणाम दोनों बातें रखी जा रही हैं, इस कारण

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

पदार्थ नित्यानित्यात्मक है, सर्वथा नित्य नहीं है। सर्वथा नित्य अपरिणामी तो कोई सत् ही नहीं हुआ करता।

अथवा जडकल्लोलवदद्वैतं द्वैतमपि च तद् द्वैतम्।
उन्मज्जच्च निमज्जच्चाप्युन्मज्जदेयेति ॥ ४१२ ॥

सत् और परिणामके परिचयमें जल कल्लोलका दृष्टान्त—उक्त गाथामें यह बताया गया था कि जैसे दीप और प्रकाश अभिन्न प्रदेशी हैं अतएव भिन्न भिन्न चीजें नहीं हैं फिर भी संज्ञा लक्षण आदिकके भेदसे इनमें परस्पर द्वैतपना नहीं है कि सत् कहीं अलग पड़ा रहता है, पर्याय कहीं अलग बनी रहा करती हैं इतने पर भी सत् शब्दसे कुछ अन्य धर्मका बोध होता है परिणाम शब्दसे अन्य धर्मका बोध होता है अथवा द्रव्य दृष्टिसे जो विषय ध्यानमें आता है उससे भिन्न ही प्रत्येक पर्याय दृष्टिमें प्रतीत होती है, इस कारण संज्ञा लक्षण आदिक अपेक्षासे भेद है। अब इस ही बातको दूसरे दृष्टान्त द्वारा बताता जा रहा है। जैसे जल और लहर नमें बतलाओ अद्वैत भाव है या द्वैत भाव है। कोई एक महान विशाल समुद्र है, उसमें लहरें भी बहुत चल रही हैं, वहीं पूछा जाय कि इन लहरोंमें और इस समुद्रमें अद्वैत भाव है या द्वैत ? तो वहाँ सर्वथा कोई एक उत्तर न आयगा। जल और लहरें सर्वथा अद्वैत हैं, यह कथन भी असंगत हो गया। यह कथन भी असंगत हो गया। जल और लहरें सर्वथा द्वैत है, यह कथन भी असंगत हो गया। यदि जल और लहर एक ही चीज है तो इसके मायने है कि लहर मात्र जल है या जलमात्र लहर है? लेकिन लहरें भिन्न भिन्न विदित होती हैं। लहरोंकी कुछ सीमायें नजर आती हैं, एक ओरसे गया दूसरी ओर जकड़ा, वहाँ नष्ट हो गयी कितनी ही बातें नजर आती हैं. पर समुद्र तो एक विशाल है, एकरूप है, लहर नानारूप हैं। अद्वैतपना कैसे समझा जायगा ? यदि कोई कहे कि समुद्र और लहर इनमें सर्वथा द्वैत है भिन्न ही चीज है तो फिर जलकी लहर क्या कहलायगी? जलमें ही लहर क्यों हो गई है ? लहर कोई भिन्न पदार्थ हो गया। समुद्र कोई भिन्न पदार्थ हो गया इस प्रकार तो वहाँ प्रतीत भी नहीं। तो जैसे जल और लहरमें कथंचित् अद्वैतभाव है और कथंचित द्वैवभाव है, इसी प्रकार भेद अपेक्षा से विचार करते हैं तो सत् और परिणाममें द्वैतभाव है। भिन्न अपेक्षासे विचार करते हैं तो सत् और परिणाममें द्वैतपना नहीं है कहीं प्रथक प्रदेशमें सत् और परिणाम नहीं रहा करते हैं, जैसे कि जल और लहरमें बात निरखी गई, भेद अपेक्षासे विचार किया जाय तो वहाँ कल्लोलें उठती हैं और कल्लोलें अस्त भी हो जाती हैं, पर जब एक अभेद दृष्टिसे देखते हैं सारे समुद्रको तो उसमें लहर अंशकी दृष्टि नहीं रहती। यद्यपि वह लहर ज्ञानमें है किन्तु ऐसे साधारण तरीकेसे वे लहरें ज्ञानमें हैं किन्तु ऐसे साधारण तरीकेसे वे लहरें ज्ञानमें आ रही हैं कि वहाँ व्यक्तियाँ मुख्य नहीं

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

बन पाती। जो जब अभेद अपेक्षासे वहाँ निरखा करते हैं तो वे लहरें न उदित होती हैं और न अस्त होती हैं, ठीक इसी प्रकार जब भेद विवक्षासे देखते हैं तो सद्भूत पदार्थमें लहरें व्यक्त होती और विलीन होती हैं, किन्तु जब अभेद विवक्षासे पदार्थको निरखते हैं तो देखो कोई यद्यपि वैसा ही पदार्थ किन्तु वहाँ लहरोंकी व्यक्तियाँ प्रधान नहीं हो पातीं और उस अभेद दृष्टिमें वे भेद व्यक्तियाँ न उचित होती हैं और न अस्त होती हैं। तात्पर्य यह है कि सत् और परिणाम अद्वैतरूप भी हैं और संज्ञा आदिक भेदसे द्वैतरूप भी है।

घटमृत्तिकयोरिव वा द्वैतं तद् द्वैतवदद्वैतम्।
नित्यं मृण्मात्रतया यदनित्यं घटत्वमात्रतया ॥४१३॥

मृण्मात्र व घटत्वमात्रकी तरह सत् और परिणाममें अद्वैत व द्वैतपने की सिद्धि—जैसे की घट और मिट्टीमें अद्वैत भी है और द्वैत भी है मिट्टी सामान्य की अपेक्षा तो जितनी भी घट आदिक अवस्थायें बनेगी वे सब एक मृतरूप ही हैं, इस कारण तो अद्वैत है पर घट और मिट्टी ये दो चीजें जो घट हैं उतने ही मात्र घट नहीं। घटसे पहिले भी मिट्टी, बादमें मिट्टी। मिट्टी व्यापक है, घट व्याप्य है। घट और मिट्टी इन दोनोंको एक नहीं कहा जा सकता। जैसे जीव और मनुष्य इनमें इस समय अद्वैत है, कोई मनुष्य जीवसे निराला नहीं है लेकिन जीव और मनुष्य इन दोनोंको एक भी नहीं कहा जा सकता। मनुष्य तो अवस्था है जीव शाश्वत है। तो व्याप्य और व्यापकके भेदसे अद्वैत है। अब उनमें नित्यत्व अनित्यत्वकी भी बात इसी तरह घटित होती है कि मिट्टी मात्रकी दृष्टिसे तो नित्य है और घटत्व मात्रकी दृष्टि से अनित्य है। जैसे जीवत्वकी दृष्टिसे नित्य है और कुछ मनुष्यत्वकी दृष्टिसे अनित्य हैं तो यही बात सब सत् और परिणाममें समझना चाहिए। यह प्रसंग चल रहा है सत् और परिणामका। अनेक जिज्ञासुओंने अनेक दृष्टान्त देकर सत् और परिणामका परिचय कराना चाहा था किन्तु वे सभी दृष्टान्त अनुपयोगी सिद्ध हुए। सत् और परिणामका सम्बन्ध क्या है? ये दो जीजें अलग-अलग नहीं हैं कि सत् कोई एक अलग पदार्थ हो और पर्याय कोई अलग पदार्थ हो, किन्तु वस्तु ही सत् परिणामात्मक है। जो द्रव्यरूप है उसे यहाँ सत् कहा है, जो पर्यायरूप है उसे यहाँ परिणाम कहा है तो सत्की दृष्टिसे नित्य है, पर्यायकी दृष्टिसे अनित्य है, सत् और परिणाम चूंकि प्रथक प्रथक प्रदेशमें नहीं हैं इस कारण अद्वैत हैं किन्तु सत् व्यापक है, परिणाम व्याप्य है, इस कारण अद्वैत है। इस प्रसङ्गमें बहुत पहिले यह पूछा गया था कि वस्तु अद्वैत रूप है या द्वैतरूप? नित्य है या अनित्य समस्त है या व्यस्त? क्रमवर्ती है या अक्रमवर्ती? उन्हींका समाधान इस कथनमें दिया गया है कि सत् और परिणाम कथंचित् अद्वैतरूप हैं, कथंचित द्वैतरूप हैं और सत् दृष्टिसे वह वस्तु नित्य है और

http://www.jainkosh.org

पर्याय दृष्टिसे वह वस्तु अनित्य है। यही बात समस्त सत् और परिणामके सम्बन्ध में जानना।

अयमर्थः सन्नित्यं मदभिज्ञप्तेर्यथा तेदवेदम् ।
न तदेवेदं नियमादिति प्रतीतेश्च सन्न नित्यं स्यात् ॥४१४॥

सत् और परिणाममें नित्यता व अनित्यताकी प्रतीतिका आधार—नित्य और अनित्यके सम्बंधमें उक्त गाथामें संकेत किया है उसका आशय यह है कि यह वही है ऐसा प्रत्यभिज्ञान होनेसे तो सत् नित्य विदित होता है। जैसे किसी पुरुषको १ वर्ष पहिले देखा था और आज देखकर कहते हैं कि यह वही पुरुष था तो यह प्रत्यभिज्ञान यह सिद्ध करता है कि जो वर्ष भर पहिले देखा था तबसे लेकर अब तक यह वही वही है अन्य नहीं हुआ है तो इस प्रत्यभिज्ञानसे नित्यताकी प्रतीति होती है और इस प्रतीति से कि यह वह नहीं है, ज्ञात होता है। कि परिणाम है, अनित्य है, अवस्थाओंको निरख करके कहा जाता है। यह मनुष्य कोई बचपनमें कुछ था, जवानीमें कुछ है बुढ़ापेमें कुछ है। तो बुढापेकी अवस्थामें यह कहा जायगा कि अब नहीं है वह न तो बच्चेकी तरह दौड़ लगाना चाहता, न जवानों की तरह फुर्तीसे काम करना चाहता तो मालूम होता है कि अब वह न रहा यह तो परिणाम की दृष्टिसे अनित्यता विदित होती है। सो सत् और परिणाममें ये दोनों बातें निरखी जाती हैं कि द्रव्यरूपसे तो सत् दिखता है। सदा सत् है अतएव नित्य है और उसमें प्रतीति होती है. यह वही है जीव, यह वही है जो अनादिसे है, अनन्त काल तक रहेगी और जब पर्याय दृष्टिसे देखते है तो वहाँ यह विदित होता है कि यह वह नहीं है तो यह वह नहीं है इस ज्ञानसे अनित्यताका भान होता है। यों वस्तु सत् परिणामात्मक है, नित्यानित्यात्मक है।

अप्युभयं युक्तिवशादेकं सच्चैककालमेकोक्तेः ।
अप्यनुभयं सदेतन्नयप्रमाणादिवादशून्यत्वात् ॥४१५ ॥

सत् और परिणाममें अनित्यत्व धर्मकी उभयता व अनुभयता वही एक सत् युक्तिके वश से उभयरूप है द्रव्य दृष्टिसे नित्य देखा पर्याय दृष्टिसे अनित्य देखा और परमाणु दृष्टिसे नित्यानित्यात्मक परखा गया। यों तो वह उभयरूप है और जब नय प्रमाणादिक किन्हीं पापोंका आश्रय नहीं किया जाता तो उस समयमें वह अनुभयरूप है। जैसे जीवके बारेमें जब द्रव्य दृष्टिसे देखा तो नित्य विदित हुआ और पर्याय दृष्टिसे देखा अनित्य विदित हुआ। जब परमाणुका आलम्बन करके निरखा तो वह नित्यानित्यात्मक ज्ञात हुआ। और जिस समय कोई ज्ञानी पुरुष नय प्रमाणका

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

सारा आलम्बन छोड़कर बड़े विश्राम और निर्विकल्पसे रहे तो उसकी दृष्टिमें तो अनुभय है तो इसी तरह जब द्रव्यदृष्टिकी प्रधानतासे देखा तो सत् दीखा। वह नित्य नजर आया। पर्याय दृष्टिकी प्रधानतासे देखा तो अनित्य देखा। वहाँ परिणाम विदित हुआ, पर प्रमाणसे जब परीक्षा करते हैं तो चूंकि वस्तु न केवल नित्यरूप हैं न केवल अनित्यरूप है तो प्रमाण नित्यानित्यात्मक परखा, जिसे उभयरूप कहेंगे और जब नय प्रमाण दोनोंका आश्रय न करेंगे तब वे अनुभयरूप हैं। यह एक अनुभूतिके ढङ्गसे अनुभयकी बात कही गई है और अवक्तव्यताके नातेसे भी उसे अनुभय कह सकते हैं। जैसे जीव: स्यात् नित्य है यह द्रव्यद्रष्टिसे देखा, जीव: स्यात् अनित्य है वह पर्याय द्रष्टिसे देखा। जीव नित्यानित्य है यह पर्याय द्रष्टिसे देखा और जीव अवक्तव्य है उसे दोनों रूपसे एक साथ नहीं कहा जा सकता, इस कारण वह अवक्तव्य रूप है। यों सत् और परिणाममें यह विवरण किया जा रहा कि पदार्थ भी सत् परिणामात्मक है। सत्की द्रष्टिमें नित्य है पर्यायकी द्रष्टिमें अनित्य है। परिणाममें उभय है और अनुभयमें या नय और प्रमाणकी द्रष्टि न रखकर देखा तो अनुभय है, अनुभयका अर्थ है अवक्तव्य और अनुभवकी दृष्टिमें अनुभयका अर्थ है कि मेरे अनुभव में वस्तु तो आ रही है परन्तु न नित्यरूपसे और न अनित्यरूपसे विकल्प है।

व्यस्तं सन्नययोगान्नित्यं नित्यत्वमात्रतस्तस्य।
अपि च समस्तं सदिति प्रमाणसापेक्षतो विवक्षायाः॥ ४१६ ॥

सत्की व्यस्तता व समस्तताका दर्शन—अब नित्य और अनित्यके सम्बन्ध में जिस तरह स्याद्वाद पद्धतिसे वर्णन किया है इसी प्रकार वस्तुको व्यस्त और समस्त के बारेमें भी स्याद्वाद विधिसे जानना चाहिए। नयकी विवक्षा करनेसे वह सत् व्यस्त है, प्रथक प्रथक है। उसमें पर्यायें अनेक शक्तियाँ सभी कुछ नजर आती हैं और उनका स्वरूप प्रथक प्रथक है। जैसे जीवमें ज्ञान है, दर्शन है, जब भेद दृष्टिसे ज्ञान दर्शन, सुख आनन्द सभी बातोंको मान लिया तो उनका स्वरूप भी भिन्न-भिन्न ही तो है। जाननेका नाम ज्ञान, आल्हादका नाम आनन्द तो स्वरूप मिल न जायगा। स्वरूप इनका जुदा-जुदा है, और इसपर भी कि वहाँ गुण कोई जुदा-जुदा नहीं है। वस्तु जीव एक है और जैसा है सो ही है। एक सत्में जो है सो है, और प्रतिसमयके परिणमनमें जो एक परिणमन है सो है। वहाँ ज्ञान है दर्शन है, आनन्द है यह बात नहीं पायी जाती, किन्तु समझानेके लिए भेद दृष्टिसे परम्परा अनुसार जो कि समझनेमें सत्य उतरती है गुण भेद करके समझा जाता है। तो जब भेद करके समझाया तो वह नयोंका ही तो आलम्बन हुआ तब वहाँ सत् व्यस्त नजर आया, प्रथक प्रथक विदित हुआ। और जब प्रमाणकी अपेक्षासे विचार करते हैं तो वह वस्तु समस्त रूप है, जो है सो ही है, उसमें प्रथक प्रथक पर्यायें हैं यह कुछ भी बात विदित न होगी।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

तो वस्तु व्यस्त रूप है या समस्तरूप है यह जो प्रश्न पहिले किया गया था उसका उत्तर इस गाथामें है। वह नय विवक्षासे व्यस्त रूप है और प्रमाण विवक्षासे समस्त रूप है।

सत्की व्यस्तता व समस्तताके एकान्तमें दोषापत्ति—सत्की व्यस्तता व समस्तताके सम्बन्धमें यहाँ जब एकान्त कर लिया जाता है तब वस्तु स्वरूपसे बाहर सिद्धान्त बन जाता है। जैसे व्यस्तताका एकान्त क्षणिकवादियोंने किया। क्षणिकवाद सिद्धान्तमें केवल कालकी व्यस्तता नहीं बताया, द्रव्य, क्षेत्र, काल भाव इन चारोंकी बतायी। नाम यद्यपि क्षणिकवाद शब्दसे प्रसिद्ध है पर क्षणिकवादका अर्थ है कालसे निरंश तकना। लेकिन यह सिद्धान्त तो निरंशवाद है। द्रव्यसे निरंश देखना अर्थात अंश कर करके जो निरंश हो उसे देखना, क्षेत्रसे निरंश निरखना, क्षेत्रके अंश कर करके जो निरंश हो उसे देखना। कालका निरंश देखना, मायने एक एक समयके परिणमन जो निरंश है उसे देखना, याने स्वरूपमें सुलक्षण मात्र कह करके एक निरंश भावको तकें तो यों निरंश पदमें द्रव्य क्षेत्र, काल भाव इन चारों दृष्टियोंसे व्यस्तता बतायी गई। तो जब एकान्त हो जाता है तो वस्तु स्वरूपसे बाहरी बात बन जाती है। समस्तका भी एकान्त जब किन्हींने किया अद्वैतवादने तो इतना एकान्त किया कि सब कुछ पदार्थ केवल एक ब्रह्म स्वरूप है एक ही है अनेक है ही नहीं। और उस ही एककी ये सब पर्यायें हैं। यह समस्तका एकान्त है और नयवादसे जाति अपेक्षा यह समस्त है एक और अर्थक्रियाकी दृष्टिसे भिन्न-भिन्न पदार्थ अपनेमें व्यस्त रूप हैं और एक ही पदार्थमें नयविवक्षासे आकाश पर्यायका बोध होनेसे व्यस्तरूप है। किन्तु वह अखण्ड सत् है। प्रत्येक पदार्थ अपने आपमें अखण्ड सत् है इस कारण वह समस्तरूप है। यों विवक्षामें पदार्थ व्यस्तरूप भी है और समस्त रूप भी है। अब इन प्रश्नोंमें एक अंतिम प्रश्न था कि पदार्थ क्रमवर्ती है या अक्रमवर्ती? इस प्रश्नका अब उत्तर देते हैं।

न विरुद्धं क्रमवर्ति च सदिति तथानादितोऽपि परिणामि।
अक्रमवर्ति सदित्यपि न विरुद्धं सदैकरूपत्वात् ॥ ४१७ ॥

सत्की क्रमवर्तिता व अक्रमवर्तिताका विचार—सत् क्रमवर्ती है क्योंकि अनादि कालसे सत् परिणमन करता हुआ है। हम किसी भी सत्को परखेंगे तो किसी पर्यायमें ही परख सकेंगे और वे पर्यायें क्रमवर्ती हैं। तो यों सत् क्रमवर्ती हुए फिर भी सत् अक्रमवर्ती है यह बात विरुद्ध नहीं है क्योंकि वह सत् सदा एकरूप ही पाया जाता है। किसी भी पदार्थमें ये दो प्रश्न किये जायें बताओ कि जीव क्रमवर्ती है या अक्रमवर्ती है? एक जीवकी बात, एक पदार्थकी बात पूछते हैं। कोई भी एक जीव

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

अपनी अवस्थाओंको क्रमसे रचता है और अवस्थामय ही जीव पाया जायगा। तब जिस अवस्थामें रहता है वह जीव उस अवस्थामय है। जीवके समस्त गुण जिस प्रकार परिणमन रूप हो रहे हैं तब उस समय वह जीव तन्मय है। तो और ये पर्यायें होती क्रमसे और जीवने देखा तन्मय तो यह जीव सत्‌क्रमवर्ती सिद्ध हुआ। यह पर्याय दृष्टि का कथन है। जब द्रव्य दृष्टिसे निरखा तो यह जीव सदा एक रूप ही पाया गया। तो जीव सदा अक्रमवर्ती है, सदा वही एक है। वहाँ पर्यायोंकी दृष्टि नहीं और गुण भेद की दृष्टि नहीं। केवल एक द्रव्य स्वरूप देख करके कहा गया है तो वह पदार्थ अक्रमवर्ती भी है।

सत्परिणामात्मक पदार्थके यथाथ बोधमें कल्याण लाभ—पदार्थ सत्‌-परिणामात्क है। सत् और परिणाम पृथक्–पृथक प्रदेशोंमें नहीं है। सत् और परिणाम परस्पर अविनाभावी धर्म हैं। सत्‌का अभाव माननेपर परिणाम (पर्याय) का भी अभाव हो जावेगा और परिणामका अभाव माननेपर सतका भी अभाव हो जायगा। सत् और परिणाम जल और तरङ्गकी भाँति अद्वैत हैं फिर भी, संज्ञा, लक्षण, समय आदिकी अपेक्षासे ये द्वैतरूप हैं। पदार्थकी सत्परिणामात्मकता विदित होनेपर ये सभी समस्यायें सुलझ जाती हैं कि सत् नित्य है या अनित्य सत् एक है या अनेक, सत व्यस्तरूप है या समस्तरूप सत क्रमवर्ती है या अक्रमवर्ती। पदार्थको स्वभावत: सत्परिणामात्मक माननेपर प्रत्येक वस्तुका स्वातन्त्र्य व निरालापन स्पष्ट समझ में आजाता है। इस सम्यक बोधसे मोह विलीन होता है और मोहके विलीन हो जानेसे विशुद्धि प्रकट होती है। विशुद्धिके पूर्ण विकासका नाम निःश्रेयस है परम कल्याण है सो कल्याण लाभके लिये वस्तुस्वरूपका सावधानी पूर्वक मनन करना चाहिये।

卐

Report any errors at vikasnd@gmail.com